वेद ईश्वरीय वाणी

वर्ष : 8 अंकः 2 अक्तूबर 2018 – मार्च 2019 अर्द्ध–वार्षिक

ब्रह्मकृत वेद सुनो, समझो, आचरण में लाओ,
विश्व से घी, दूध, मधु, जल की कमी हटाओ

ओ३म्

''पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम्।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम्।।''

ओ३म्

(सामवेद मन्त्र 1299)

(यः) जो मनुष्य ***(पावमानीं)*** प्रभु की स्तुति रूप ऋचाओं के ***(ऋषिभिः संभृतम् रसम्)*** ऋषियों द्वारा संगृहीत वेद के सूक्त समुदाय का ***(अध्येति)*** अध्ययन करता है ***(सरस्वती)*** वेद वाणी ***(तस्मै)*** उसके लिए ***(क्षीरम्)*** दुग्ध ***(सर्पिः)*** घृत ***(मधु)*** मधु ***(उदकम्)*** जल ***(दुहे)*** पूर्ण रूप से देती है।

भावार्थ : जो साधक मन्त्र द्रष्टा ऋषियों से वेदाध्ययन करते हैं, वेद वाणी उनके लिए दूध, घी, मधु और जल प्रदान करती है। अतः हम वेदमार्ग को अपना कर नित्य यज्ञ करके, सृष्टि से जल और अन्न की कमी से तड़प रही जनता के दुःख का नाश करें।

Destroy deficiency of water etc. by following Vedic Path

The solution of every problem has already been advised by Almighty God in Vedas. Nowadays not India alone but whole of the world is facing deficiency of water and other matters also. The above quoted mantra advises that those who follow vedic path under the guidance of a Rishi then the vedvanni provides them with ghee, milk, honey and water.

वेद ईश्वरीय वाणी

मुद्रक, स्वामी एवं प्रकाशक राज कुमार गुप्ता

संपादक स्वामी राम स्वरूप 'योगाचार्य' (01892236107)

सह संपादक साध्वी गीतांजली (01892236107)

उप–संपादक सुप्रिया गन्दोत्रा (9906092521)

''वेद ईश्वरीय वाणी''

प्रकाशन: शिवा एन्कलेव, लेन नं. –3, रूप नगर, जम्मू – 180013 (जम्मू व कश्मीर)

डी.डी. लिप्रोग्राफिक्स

3–एकता आश्रम न्यू रिहाड़ी, जम्मू –180005 (जम्मू व कश्मीर) से मुद्रित

ओ३म्

विषयानुक्रमणिका

ओ३म्

* सामवेद मन्त्र 1299 की व्याख्या			1
* सम्पादकीय (वेदों में वर्णित ईश्वर का स्वरूप)	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	3
* वेदों में शुभ कर्मों का स्वरूप	–	साध्वी गीतांजलि	13
* वेदान्त और ब्रह्मवाद	–	आचार्य विद्याभानु शास्त्री	17
* ज़िन्दगी दूसरों के भरोसे नहीं जीनी	–	ऋचा कौशिक	22
* End of Life Care The Neglected part of Life	-	Dr. Parveen Kr. Sharma	23
* कर्म आधारित जीवन	–	पी.आर.मेहरा	31
Correspondence between Swami ji & S. Khushwant Singh ji			
* तलाश एक सच्चे सखा की	–	अंजना दीवान	33
* शुद्ध बुद्धि से हो शुद्ध कर्म...	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	37
* Difference between Alive.....	-	Swami Ram Swarup 'Yogacharya'	40
* वेद मार्ग पर चलकर चित्त के.....	–	वीना राज	42
* Medical Science in Atharvaved	-		47
* पौर्णमासी और अमावस्या	–		47
* गुरु–शिष्य संवाद	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	48
* Entitlement for Donations	–	Swami Ram Swarup 'Yogacharya'	52
* बात जो दिल को छू गई	–	शीतल गुप्ता	55
* स्वामी रामस्वरूप जी के वैदिक प्रवचनों..	–	बिपिन बाडेका	58
* Guava	–	Sugandh ' Sudhi'	58
* अर्ध–मत्स्येन्द्र आसन	–	स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'	61
How to achieve that Elusive.....	–	Yashvendra Singh	62
Subscription Form			

NOTE : Writers are responsible for their own articles

''कर्म योग वास्तव में एक रहस्य है– श्रीमद् भगवद्गीता''

संपादकीय

वेदों में वर्णित ईश्वर का स्वरूप

संसार में हम, मनुष्य का शरीर धारण करके किसी विशेष उद्देश्य से आए हैं और वह उद्देश्य है ईश्वर भक्ति द्वारा जीवन में आने वाले दु:खों का नाश करके मोक्ष रूप परम सुख की प्राप्ति।

ईश्वर से उत्पन्न ज्ञान–वेदों का उपदेश है कि प्रत्येक अन्य प्राणी से विलक्षण, केवल मनुष्य की बुद्धि ही, मनन–चिन्तन करने में समर्थ है। इस कटु सत्य को याज्ञवल्क्य ऋषि ने शतपथ ब्राह्मण ग्रन्थ में यह कहकर स्पष्ट किया है–

''मन्त्रा मननात्''

अर्थात् मनन करने से मन्त्र कहलाए। यह सर्वविदित है कि अनादिकाल से ऋषि–मुनियों और जिज्ञासुओं द्वारा वेद की ऋचाओं का मनन–चिन्तन होता आया है अन्यथा मन्त्र का ज्ञान तथा इसका प्रभाव समाप्त प्राय: हो जाता है। आज से लगभग ***साढ़े पाँच हज़ार वर्ष*** पूर्व महाभारत काल में हुए कौरवों–पाण्डवों के युद्ध तक तो वेदों का मनन–चिन्तन और फलस्वरूप वेदों का प्रभाव विश्व में बना रहा जिस कारण भाईचारा, प्रेम–भाव, साथ–साथ सबकी उन्नति तथा जनता में स्थायी रूप से सुख–शांति भी स्थापित रही। इसके पश्चात् किसी कारण वश वेदों के ज्ञान का सूर्य अस्त प्राय: हुआ और मनुष्यों ने लगभग ***दो–ढाई हज़ार वर्ष*** से अपनी इच्छानुसार ईश्वर भक्ति के, वेद–विरुद्ध स्वयं निर्मित मार्गों पर चलना प्रारम्भ कर दिया। इस विषय में तुलसीदास जी ने भी इस प्रकार अपने विचार व्यक्त किए हैं–

दोहा– ***''श्रुति संमत हरि भक्ति पथ संजुत बिरति बिबेक,***
तेहिं न चलहिं नर मोह बस कल्पहिं पंथ अनेक''

(उत्तरकाण्ड १००(ख))

अर्थात् वेद में कहे ज्ञान तथा वैराग्य के अनुसार जो परमेश्वर की भक्ति का मार्ग है उस सच्चे मार्ग को मनुष्य ने मोहवश छोड़ दिया और ***वेद के विरुद्ध*** अनेकों नए–नए पंथों की कल्पना करते हैं। वेद विरुद्ध लिखने का भाव यही है कि ***मनुष्यों ने ऐसे–ऐसे भक्ति के मार्ग बनाए जिनका प्रमाण वेदों में वर्णित वेद मन्त्रों में नहीं मिलता।*** उदाहरणार्थ ईश्वर ने वेदों में स्वयं अपना स्वरूप निराकार, सर्वव्यापक, अजन्मा आदि कहा है परन्तु मनुष्यों के बनाए हुए मार्ग में ईश्वर को साकार, जन्म लेकर अवतार धारण करने वाला, एक देशी आदि कहा है।

वेद मन्त्रों अथवा अन्य विषयों पर जब हम वेदों के मन्त्रों का मनन करते हैं तो पाते हैं कि विश्व में केवल दो ही तत्त्व हैं– ***जड़ और चेतन।*** प्रकृति तो जड़ है जिससे यह सब जड़ संसार बनता है और चेतन तत्त्व परमात्मा तथा जीवात्माएँ हैं। ईश्वर ने कर्मानुसार हम चेतन जीवात्माओं को मनुष्य का शरीर दिया है जिसमें पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, मन और बुद्धि लगा दी है। मन पाँच ज्ञानेन्द्रियों से ज्ञान ग्रहण करता है और उसका मनन–चिन्तन आदि करता है। बुद्धि मन से उस ज्ञान को प्राप्त करके अपना कर्म निश्चित करती है और जीवात्मा को भेजती है। जीवात्मा पुनः बुद्धि के निर्णय को हाँ या ना में बदल कर वापिस बुद्धि को, बुद्धि पुनः मन को और मन कर्मेन्द्रियों को कर्म करने के लिए जीवात्मा को आज्ञा प्रदान करता है। भाव यह है कि जब ईश्वर ने मनुष्य को बुद्धि मनन–चिन्तन के लिए दी है और ***ऋग्वेद*** में कहा– ***''मनुः भव''*** अर्थात् मनन कर। तब हमें पूर्व के युगों की भांति वेदों का मनन, अच्छी बातों का मनन–चिन्तन, वेद के ज्ञाता विद्वानों के साथ बैठकर करना चाहिए था जो कि महाभारत युद्ध के पश्चात् नहीं किया गया। ***फलस्वरूप ईश्वर से उत्पन्न वैदिक संस्कृति की हानि हुई और वैदिक संस्कृति के स्थान पर मनुष्यों के बनाए हुए धर्मों का उदय हुआ। इस प्रकार ईश्वर से उत्पन्न वेद ज्ञान रूप सूर्य का अस्त एवं मनुष्य की बुद्धि से उत्पन्न***

भिन्न–भिन्न धर्म मार्गों का उदय हुआ।

अब यही जड़–चेतन का विषय लीजिए। जड़ प्रकृति से रचे संसार के जड़ पदार्थों में जड़ के ही गुण होते हैं। उदाहरणार्थ यदि हम एक पत्थर, जो जड़ तत्त्व है, उससे किसी मनुष्य की मूर्ति बनाते हैं (जो कि आज विश्व में कई नेताओं आदि की बनी हुई है), तो वह मूर्ति जड़ ही रहेगी, वह मनुष्य की तरह ना चलेगी, ना बोलेगी, ना देखेगी, ना सुनेगी, ना कुछ खाएगी, इत्यादि।

विपरीत में चेतन परमेश्वर से उत्पन्न चेतन वैदिक ज्ञान द्वारा चिन्तन करने से ज्ञात होता है कि परमेश्वर एक निराकार, चेतन तत्त्व है, उसमें अनन्त दिव्य गुण हैं। उदाहरणार्थ ***यजुर्वेद मन्त्र 40/8*** में स्वयं ईश्वर अपने दिव्य स्वरूप का उपदेश करते हुए कहते हैं कि हे मनुष्यों! वह ब्रह्म ***(शुक्रम्)*** सर्वशक्तिमान् ***(अकायम्)*** शरीर से रहित अर्थात् निराकार है ***(अव्रणम्)*** उसमें छिद्र नहीं हो सकता और ना ही उसके टुकड़े हो सकते हैं जब कि जड़ पदार्थ के टुकड़े हो सकते हैं ***(अस्नाविरम्)*** निराकार है इसलिए परमेश्वर की नाड़ियाँ आदि नहीं होतीं ***(शुद्धम्)*** शुद्ध है– अविद्या आदि दोषों से रहित है ***(अपापविद्धम्)*** पाप आदि से परे है ***(परि+अगात्)*** सर्वव्यापक है ***(कविः)*** सबकुछ जानने वाला है ***(मनीषी)*** सबके मन की जानने वाला है ***(परिभूः)*** दुष्ट–पापियों को नष्ट करने वाला है ***(स्वयंभूः)*** अनादि और अविनाशी स्वरूप वाला अर्थात् ईश्वर किसी भी पदार्थ से नहीं बनाया गया है। जैसे मिट्टी से घड़ा बनता है वैसे परमेश्वर किसी पदार्थ से नहीं बनता और ना ही परमेश्वर से आगे कोई पदार्थ बनाया जा सकता है। परमेश्वर के माता–पिता भी नहीं होते। इसलिए परमेश्वर गर्भ में नहीं आता और ना ही जन्म लेता है। ***(शाश्वतीभ्यः)*** अनादि, अविनाशी और जो उत्पत्ति और विनाश से रहित ***(समाभ्यः)*** प्रजा है, उसके लिए परमेश्वर ***(याथातथ्यतः)*** यथार्थता से अर्थात् सत्यता से ***(अर्थान्)*** वेदों के द्वारा ***(व्यदधात्)*** उपदेश करता है ***(सः)*** वह परमात्मा है अर्थात् इन दिव्य गुणों युक्त परमेश्वर की ही उपासना करनी चाहिए।

अतः अनन्त शक्तियों वाला परमेश्वर, जो बिना किसी की सहायता के सृष्टि रचना, उसकी पालना, सृष्टि का संहार करके पुनः सृष्टि रच देता है, उसे जन्म/अवतार लेकर किसी धनुष–बाण आदि की सहायता द्वारा किसी का वध

करने की क्या आवश्यकता है? ***ऋग्वेद मन्त्र 10/48/6*** में स्वयं ईश्वर कहता है यदि मेरे हज़ारों–लाखों विरोधी भी खड़े हों तब भी मैं उनको बिना किसी शस्त्र आदि के क्षण भर में नष्ट कर देता हूँ।

परमेश्वर, अपने स्वरूप से उत्पत्ति और विनाश से रहित जीवात्माओं के लिए, यथार्थ रूप से वेदों के द्वारा सब पदार्थों का एवं मनुष्य योनि को प्राप्त जीवात्माओं को अर्थ, धर्म, काम एवं मोक्ष का उपदेश देता है। अन्यथा कोई भी मनुष्य विद्वान् ना हो सके और ना ही मोक्ष रूप फल को प्राप्त कर सके। वेदों में वर्णित इसी चेतन ब्रह्म की हमें उपासना करनी चाहिए, अन्य की नहीं।

ये सब कहे दिव्य चेतन गुण जड़ पदार्थों में नहीं होते। इसलिए जैसा ऊपर पत्थर की बनी मनुष्य की मूर्ति का उल्लेख किया है, उस मूर्ति में ये दिव्य गुण नहीं हो सकते। सम्भवत: इसी कारण चेतन ब्रह्म से उत्पन्न चारों वेदों में मूर्ति पूजा के विषय में कुछ भी नहीं कहा है। यह ऊपर पहले ही लिख दिया गया है कि महाभारत काल के पश्चात् वेद विद्या का सूर्य अस्त हो गया था और मनुष्यों ने वेदाध्ययन समाप्त प्राय: कर दिया था। ***फलस्वरूप हीं वेदाध्ययन के अभाव में मनुष्य जड़ और चेतन तत्त्व के भेद को नहीं जान पाए।***

कई कहते हैं कि मूर्ति में ध्यान लगाओ क्योंकि मूर्ति हिलती–जुलती नहीं है, शान्त और ध्यान जैसी अवस्था में, एक स्थान पर स्थिर हुई बैठी रहती है। अत: यदि आप मूर्ति का दर्शन करोगे तो जीवात्मा भी मूर्ति की तरह शान्त चित्त होकर ध्यान की अवस्था में चला जाएगा। परन्तु यदि हम इस विषय पर घोर चिन्तन–मनन करेंगे तो पाएँगे कि जैसे यह स्वाभाविक ही है कि सूर्य अस्त होने पर अन्धकार छा जाता है, इसी प्रकार यदि मनुष्य वेदाध्ययन, योगाभ्यास आदि द्वारा ज्ञान प्राप्त नहीं करता तो उसकी बुद्धि में ज्ञान का सूर्य उदय होता ही नहीं और स्वाभाविक ही उस अविद्याग्रस्त बुद्धि में अज्ञान रूप अन्धकार छाया रहता है। ऐसी बुद्धि अपनी इच्छानुसार जड़ को चेतन कह सकती है और चेतन को जड़ कह सकती है अथवा ईश्वर की सत्ता को नकार भी सकती है। ***जबकि वेद एवं शास्त्रादि में निर्देश है कि प्रत्येक नर–नारी वेद–शास्त्र की ज्ञाता होकर तर्क–वितर्क से***

सत्य को सिद्ध करे। केवल अपनी मनमानी से कुछ भी कहकर जनता में मिथ्या ज्ञान ना फैलाए। गौतम मुनि रचित न्याय शास्त्र के अनुसार जो सिद्धान्त के जानने के लिए विचार–विमर्श किया जाता है, उसी का नाम तर्क है। परन्तु यह दुर्भाग्य है कि आज यदि कोई जिज्ञासु किसी धर्माचार्य से जड़–चेतन के अन्तर को समझने के लिए अथवा वेदों के मर्म को जानने के लिए प्रश्न करता है तो उसे डाँटकर यह कहकर चुप रहने को मजबूर कर दिया जाता है कि यह धर्म का मामला है, श्रद्धा का मामला है, इस पर केवल विश्वास करो, इत्यादि। इस विषय में योग ***शास्त्र सूत्र 1/7*** के अनुसार किसी भी विचार आदि को सिद्ध करने के लिए आगम प्रमाण अर्थात् वेद अथवा आप्त पुरुष के उपदेश का प्रमाण देना आवश्यक है। ***व्यासमुनि जी*** इस सूत्र की व्याख्या में कहते हैं कि आप्त पुरुष जब स्वयं का देखा एवं अनुमान किया ज्ञान दूसरे पुरुष को शब्दों द्वारा देता है तब सुनने वाले को आप्त पुरुष के शब्दों से जो ज्ञान प्राप्त हुआ, तो उस ज्ञान ग्रहण करने वाली वृत्ति को आगम प्रमाण वृत्ति कहते हैं। इसके विपरीत यदि उपदेश करने वाला वक्ता वेद ज्ञान और तप द्वारा शब्द, अर्थ और परमेश्वर का साक्षात् दर्शन नहीं कर पाया, तब उसका शब्दों द्वारा दिया ज्ञान अश्रद्धा से पूर्ण मिथ्या ज्ञान होता है।

यह बहुत दु:ख की बात है कि वर्तमान में तथा कथित साधुओं द्वारा फैलाए आडम्बर, अन्धविश्वास और मिथ्यावाद के कारण आज जनता में वेद–शास्त्रादि का सत्य ज्ञान, पूर्व के युगों की भांति, प्राय: नहीं रहा। फलस्वरूप ही तो जड़–चेतन, मूर्ति पूजा और वेदानुसार निराकार ब्रह्म की उपासना में आज विवाद पड़ गया। इसमें ***यजुर्वेद मन्त्र 40/12*** का प्रमाण है कि ***''अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते''*** अर्थात् अविद्या की जो उपासना करते हैं, वे अज्ञान में प्रवेश करते हैं। ***योग शास्त्र सूत्र 2/5*** में अविद्या के चार लक्षण हैं:–

१. अनित्य को नित्य २. अपवित्र को पवित्र

३. दु:ख को सुख ४. अनात्मा को आत्मा जानना,

यह अविद्या है। यहाँ अनात्मा को आत्मा समझना अविद्या है, इस पर विचार करें:–

यह शरीर अनात्मा है अर्थात् जड़ है, चेतन नहीं हैं। अत: यह शरीर

नाशवान् है। परन्तु अविद्याग्रस्त मनुष्य इस शरीर को जड़ और नाशवान् ना मानकर चेतन और अविनाशी तत्त्व मान लेता है और शरीर का अभिमान करता है, इत्यादि। वेद विद्या के अभाव में यही विचार अनात्मा ***(जड़)*** को आत्मा ***(चेतन)*** मानने वाला, अविद्यायुक्त विचार है, जिस कारण आज विश्व में मूर्ति पूजा हो रही है। भाव यह है कि ऐसे पुरुष विद्या अर्थात् चेतन ब्रह्म का तिरस्कार करके अविद्या अर्थात् जड़ पदार्थ की उपासना करते हैं।

इस विषय में ऊपर कहे ***यजुर्वेद मन्त्र 40/12*** का प्रमाण है कि ऐसे अविद्याग्रस्त पुरुष, जो अनात्मा को आत्मा मानने लगते हैं, वे अन्धकार रूप दु:ख सागर में पड़े सदा दु:खी रहते हैं।

सारांश यह है कि यदि हम ऊपर कही जड़ पूजा वाली बात मान लें कि शान्त, ध्यान अवस्था में स्थिर पत्थर की मूर्ति देखकर जीवात्मा भी ऐसा ही शान्त एवं स्थिर हो जाता है, तो क्या हम यह मान लें कि चेतन जीवात्मा मूर्ति की तरह जड़ हो जाएगा? ऐसा होना तो सर्वदा असम्भव है। इसलिए वेदों और पूर्व के ऋषि–मुनियों तथा पिछले युगों के अनुसार तो मूर्ति पूजा सम्भव नहीं। वैसे भी जड़ पदार्थ से बनी हुई मूर्तियों के गुण चेतन ब्रह्म से तनिक से भी नहीं मिलते। इसलिए मूर्ति ना तो ब्रह्म को सकती है और ना ही ब्रह्म के समान हो सकती है। यह गुण तो वेद मार्ग पर चलने वाले विद्वानों में ही प्रकट होते हैं कि वे कठोर वैदिक साधना द्वारा समाधिस्थ होकर ईश्वर का साक्षात्कार करते हैं तथा ***अथर्ववेद मन्त्र 4/11/7*** के प्रमाण से ***''रूपेण इन्द्र:''*** अर्थात् ईश्वर नहीं अपितु ईश्वर के समान हो जाते हैं। परन्तु जड़ मूर्ति ईश्वर के समान कदापि नहीं हो सकती। ऐसा कोई वैदिक प्रमाण भी नहीं है। ***ऋग्वेद मन्त्र 6/50/14*** में कहा, हे मनुष्यों! ***(अज: एकपात्)*** जिसका जगत् में एक पाद है, जो कभी नहीं उत्पन्न होता, वह परमात्मा ***(न: शृणोतु)*** हमारी प्रार्थनाओं को सुने, इत्यादि। मन्त्र से सिद्ध हुआ कि अजन्मा परमात्मा, जो चेतन है, वही प्रार्थना सुनता है, जड़ नहीं। मन्त्र में परमेश्वर को जन्म–मरण आदि व्यवहार से रहित कहा है। एकपात् का अर्थ है कि ईश्वर की अनन्त शक्ति में से एक अंश मात्र शक्ति जब प्रकृति से संयोग करती है तब इस संसार की रचना हो जाती है।

यजुर्वेद मन्त्र 40/8 में ईश्वर को सर्वव्यापक, ***''शुक्रम्''***

सर्वशक्तिमान् एवं वेद विद्या का दाता आदि कहा है। इसी प्रकार ***यजुर्वेद मन्त्र 32/3*** में परमेश्वर कैसा है, इसका उपदेश देते हुए कहा– ***''न तस्य प्रतिमाऽअस्ति''*** अर्थात् उस परमेश्वर की प्रतिमा नहीं होती। भाव यह है कि ईश्वर को मापने वाला, उसके समान तोलने का साधन एवं आकृति/मूर्ति आदि नहीं होती।

मन्त्र 32/2 में कहा कि पूर्ण परमेश्वर को कोई भी, ना ऊपर से, ना नीचे से और ना मध्य में से ही ग्रहण कर सकता है क्योंकि ईश्वर निराकार एवं सर्वत्र है। ऐसे निराकार परमेश्वर को ही वेद मार्ग पर चलकर, योगाभ्यास आदि के द्वारा जाना जाता है। अत: यदि कोई कहे कि परमेश्वर अवतार लेता है तो ईश्वर द्वारा अवतार लेना सम्भव नहीं क्योंकि वेद में ईश्वर को ***''अकायम्''*** अर्थात् काया रहित ***(निराकार), ''अव्रणम् अस्नाविरम्''*** अर्थात् जिसके टुकड़े नहीं हो सकते और जो नाड़ी आदि के बन्धन से रहित है, सर्वत्र व्यापक और अजन्मा कहा है। ***यजुर्वेद मन्त्र 40/5*** में कहा– ***''तत् न एजति''*** अर्थात् वह परमेश्वर चलता नहीं क्योंकि वह सर्वव्यापक है, कोई एक भी ऐसा परमाणु नहीं जिसमें परमेश्वर ना हो। अत: सब संसार और परमाणुओं से निकलकर ईश्वर अवतार कैसे ले सकता है?सबसे गहन विचारणीय विषय यह भी है कि इन गुणों से तथा वेदों में और भी कहे ईश्वर के गुणों से मूर्ति के गुण नहीं मिलते। सर्वव्यापक होने के कारण परमेश्वर के चलने के लिए तो कोई स्थान ही नहीं है। परन्तु मूर्ति तो एक देशी है अर्थात् एक स्थान पर है, दूसरे स्थान पर नहीं है। अत: मूर्ति एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाई जा सकती है। वैसे भी ***यजुर्वेद मन्त्र 40/6*** में कहा कि विद्वान् लोग विद्या, धर्माचरण और योगाभ्यास के पश्चात् परमात्मा में ही सब जड़ और चेतन पदार्थों को देखते हैं तथा सब पदार्थों में परमात्मा को देखते हैं। अब विचार का विषय यह है कि संसार के कण–कण में परमात्मा है और सारा संसार परमात्मा में है तथा परमात्मा अशरीरी है, उसका शरीर नहीं होता। तो इन सब प्रकट सत्य वैदिक ज्ञान को त्याग कर के तो हम अविद्याग्रस्त–अज्ञानी ही कहलाएँगे और वेदों के ज्ञान के अभाव में ही कोई चेतन ब्रह्म को जड़ मूर्ति मानकर उसकी उपासना कर सकता है, ज्ञानी नहीं कर सकता। जो परमेश्वर तीनों लोकों के एक–एक परमाणु में व्यापक है, वह अवतार लेने के लिए एक

छोटे से गर्भ में कैसे आ सकता है?

वस्तुत: समस्या विद्या और अविद्या की है। विद्या का भाव है वेदमार्ग पर चलकर चेतन ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त करना। अविद्या का वर्णन पहले ही ऊपर कर दिया गया है। सृष्टि रचना, पालन, संहार और पुन: सृष्टि का बनना, यह अनादि, अविनाशी एवं स्वाभाविक क्रिया है, जो ईश्वर के आधीन है। इसी प्रकार प्रत्येक सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर से वेद ज्ञान उत्पन्न होकर चार ऋषियों के हृदय में प्रकट होता है, यह क्रिया भी सृष्टिक्रम में है। जैसा कि ***यजुर्वेद मन्त्र 31/7*** में कहा–

''तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः सामानि जज्ञिरे।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत।''

अर्थ: ईश्वर उपदेश करता है कि हे मनुष्यों! (तस्मात्) उस पूर्ण (यज्ञात्) पूजनीय (सर्वहुत:) सबके द्वारा ग्रहण करने योग्य, उस परमेश्वर से (ऋच:) ऋग्वेद (सामानि) सामवेद (जज्ञिरे) उत्पन्न हुए हैं।

(तस्मात्) उस परमात्मा से (छन्दांसि) अथर्ववेद (जज्ञिरे) उत्पन्न हुआ है (तस्मात्) उस परमात्मा से (यजु:) यजुर्वेद (अजायत) उत्पन्न हुआ है। तुम उसे जानो। इस प्रकार वेद भी अनादि हैं। वेदों में मूर्ति पूजा का विधान नहीं है। पिछले युगों में तथा श्रीराम एवं श्रीकृष्ण महाराज आदि के समय में भी मूर्ति पूजा नहीं थी। क्योंकि वेदानुसार देव उसे कहते हैं जो मनुष्य वेद का ज्ञान प्राप्त कर लेता है अर्थात् मनुष्य ही प्रत्यक्ष देव बन जाता है। वेद की ज्ञाता नारी देवी कहलाती है। तो वैदिक काल में तो देव प्रत्यक्ष होते ही थे परन्तु महाभारत काल के बाद जब वेद का सूर्य अस्त हो गया तथा बुद्धि में वेद ज्ञान का अभाव हो गया तब अविद्याग्रस्त मनुष्य वेद में वर्णित अष्टाँग योग विद्या को नहीं जान सके और ना ही निराकार परमेश्वर के ध्यान में बैठ सके। इसलिए सबने मूर्ति का ध्यान लगाने का अभ्यास प्रारम्भ कर दिया और इस प्रकार मूर्ति पूजा शुरू हो गई।

मनु स्मृति में कहा–

नास्तिको वेद निन्दकः

भाव है कि वेदों की निन्दा अर्थात् अपमान, वेदों का त्याग, वेद–विरुद्ध आचरण करने वाला नास्तिक कहलाता है। अत: जो ग्रन्थ

वेद के विरुद्ध हैं, वे प्रमाणिक ग्रन्थ नहीं कहे जाते। अथर्ववेद के अनुसार उनका त्याग करना आवश्यक है। मनुष्य का ज्ञान जड़ की पूजा से नहीं बढ़ सकता। इसीलिए चारों वेदों में ईश्वर ने वेद एवं अष्टाँग योग विद्या के ज्ञाता, संयमी विद्वान् के आश्रय में रहकर, उसकी सेवा करके चेतन ब्रह्म एवं चेतन वेद विद्या को प्राप्त करने का उपदेश किया है। समस्या यही है कि ईश्वर ने तो कहा है—

''श्रुधि श्रुत्कर्ण'' (सामवेद)

वेदों को कानों से सुनो।

''श्रुतेन मा वि राधिषि'' (अथर्ववेद)

वेद सुनना छोड़ ना देना, इत्यादि और परमेश्वर की इस आज्ञा को पिछले युगों में प्रत्येक नर—नारी ने स्वीकार किया और वे वेद मार्ग पर चलकर सुखी हो गए। परन्तु इस युग में वेद—विद्या के अभाव में मनगढ़न्त पूजा ने मनुष्यों को सुख अनुभव होने नहीं दिया। आज यह कथन सही बैठता है—

''नानक दुखिया सब संसार''

कोई कहता है कि साकार मूर्ति तो सामने होती है, दिखती है, उसमें मन स्थिर हो जाएगा परन्तु निराकार में मन स्थिर होना कठिन है। परन्तु सत्य यह है कि साकार मूर्ति में मन कभी स्थिर नहीं हो सकता क्योंकि चाहे आँख खोल कर मूर्ति को देखें, चाहे आँख बन्द करके उसको देखने का अनुमान लगाएँ, दोनों अवस्थाओं में मन मूर्ति के एक स्थान से दूसरे स्थान और दूसरे से तीसरे स्थान, इत्यादि में घूमता—फिरता है। जैसे कभी मस्तक, कभी नासिका, कभी ठोड़ी, कभी वस्त्र, कभी आसन इत्यादि में दौड़ता है। निराकार में ध्यान लगाने पर यदि मन दौड़ेगा तो वह मन अनन्त परमात्मा, जो सर्वव्यापक है, उसमें ही दौड़ेगा। परन्तु परमात्मा के ही गुण, कर्म, स्वभाव का विचार करता—करता आनन्द में मग्न होकर स्थिर हो जाता है।

कई लोग कहते हैं कि ईश्वर सबमें है तो मूर्ति में भी है इसलिए मूर्ति की पूजा करनी चाहिए। इस विषय में यही कहा जा सकता है कि ईश्वर सबमें है पर सब नहीं है अर्थात् ईश्वर पानी में है पर पानी नहीं है, सूर्य में है पर सूर्य नहीं, नर—नारी में है परन्तु नर—नारी नहीं है। इसी प्रकार मूर्ति में है परन्तु ईश्वर मूर्ति नहीं है। जैसे तार में करंट है परन्तु इसका मतलब यह नहीं है कि तार भी करंट है। तार के गुण अलग हैं, करंट के गुण अलग हैं।

इसलिए वेदों में मूर्ति पूजा का विधान नहीं है क्योंकि निराकार ईश्वर ना अवतार ले सकता है, ना मूर्ति बन सकता है। ईश्वर को सर्वशक्तिमान् कहा है, अत: जो ईश्वर बिना शरीर, आँख, नाक, कान इत्यादि के संसार की रचना, पालना और संहार आदि महान् दिव्य कर्म करता है और दुष्टों को दण्ड देता है तो वह अवतार लेकर किसी का वध करने क्यों आएगा? उसकी तो तनिक सी शक्ति ही दुष्टों का नाश कर देती है। कारण के बिना कार्य नहीं होता। ईश्वर के अवतार लेने का कोई कारण बनता ही नहीं है। परन्तु वेद का ज्ञान प्राप्त किए बिना मनुष्य की बुद्धि ज्ञानवान् नहीं होती। अत: अविद्याग्रस्त बुद्धि जड़ पदार्थ को ही चेतन मानकर जीवन व्यर्थ कर लेती है। गायत्री मन्त्र में भी तो परमेश्वर से यही प्रार्थना है— ***''धियो यो नः प्रचोदयात्''*** अर्थात् हे प्रभु! मेरी बुद्धि में ज्ञान का प्रकाश कर दो और वेद के ज्ञानयुक्त शुभ कर्मों को करने की प्रेरणा दे दो। अब ज्ञान तो विद्—ज्ञाने, वेद है। जब वेद का अध्ययन ही किसी ने नहीं किया हो तो वह ज्ञानी कैसे कहलाया जा सकता है और जिसने ईश्वर से उत्पन्न वेदों का अध्ययन कर लिया और वेद में उपदेशित तथा ***मनु स्मृति श्लोक 1/23*** में वर्णित ज्ञान, कर्म एवं उपासना, इन तीनों विद्याओं का ज्ञाता हो गया तो वह ज्ञानी जड़ मूर्ति की पूजा कैसे कर सकता है अर्थात् मूर्ति पूजा नहीं करेगा। इसलिए हम वेदाध्ययन द्वारा ज्ञानी बनें और देश को पुन: विश्वगुरु का पद प्राप्त कराएँ। सृष्टिक्रम में अनादिकाल से ***अथर्ववेद मन्त्र 19/41/1*** में कही यही अपरिवर्तनीय परंपरा है कि ऋषियों ने वेदाध्ययन आदि तप किया और राष्ट्र को सुदृढ़ बनाया। तो हम क्यों नहीं चेतते कि हमने अनादिकाल से चली आ रही इस परंपरा/नियम को तोड़ कर दु:खों को आमन्त्रित किया है। अत: राष्ट्र को सुदृढ़ बनाने और जनता को सुख देने के लिए आओ हम पुन: वेदों की ओर लौटें।

स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'
मुख्य सम्पादक
वेद मन्दिर, योल (हि.प्र.)

वेदों में शुभ कर्मों का स्वरूप

साध्वी गीतांजलि

परमेश्वर ने वेदों में दीर्घायु, सुख–सम्पदा तथा मोक्ष तक की प्राप्ति के लिए शुभ कर्मों का स्वरूप समझाया है। ***यजुर्वेद मन्त्र 7/48*** में कहा कि इस संसार में जीव कर्म करने के लिए स्वतन्त्र है परन्तु किए हुए कर्मों का फल परमात्मा प्रदान करता है। ***ऋग्वेद मन्त्र 10/135/1,2*** में भी ईश्वरीय ज्ञान है कि हम अपने पिछले जन्मों में किए हुए शुभ–अशुभ कर्मों का फल सुख–दु:ख के रूप में इस जन्म में भोगने आए हैं तथा इस जन्म के किए हुए कर्मों का फल भविष्य में आने वाले जन्मों में भोगेंगे।

वेदों पर ही आधारित ***श्रीमद्भगवद्गीता श्लोक 2/47*** में योगेश्वर श्रीकृष्ण महाराज ज्ञान दे रहे हैं कि ***हे अर्जुन! तेरा केवल कर्म करने मात्र में अधिकार है। कर्मफल पर तेरा अधिकार नहीं है।*** स्पष्ट है कि उक्त यजुर्वेद मन्त्र के अनुसार कर्मफल का दाता ईश्वर है।

अत: जीव कर्मफल की इच्छा, दुविधा, चिन्ता त्यागकर, केवल पुरुषार्थी होकर वेदोक्त कर्म और नियमों को जाने एवं तदानुसार शुभ कर्म करने पर ध्यान केन्द्रित करे। इस प्रकार जब हम परमेश्वर में कर्मों को अर्पित करेंगे– ***'ईश्वर प्रणिधानानि'*** तो हमारा ईश्वर पर भरोसा पक्का हो जाएगा और हमें ईश्वर सदा शुभ कर्म करने की प्रेरणा देगा। ईश्वर ने ***यजुर्वेद मन्त्र 40/2*** में यहाँ तक ज्ञान दिया कि शुभ कर्मों द्वारा जिज्ञासु मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।

कर्मों का रहस्य अत्यन्त गूढ़ है। इस विषय में सांख्य शास्त्र के रचयिता कपिल मुनि ने भी ***सूत्र 6/41*** में बहुत सुन्दर कहा–

''कर्म वैचित्र्यात् सृष्टिवैचित्र्यम्''

अर्थात् मनुष्यों के कर्मों की विचित्रता/ विभिन्नता से ही जगत् विचित्र दृष्टिगोचर होता है।

विदुर नीति श्लोक 7/35 में विदुर जी समझाते हैं– ''जो विद्वान् पाप रूप फल देने वाले कर्मों को आरम्भ नहीं करता वह वृद्धि को प्राप्त करता है और जो पूर्व में किए गए पापों पर विचार ना करके, उन्हीं का अनुसरण करता है, वह दुष्ट बुद्धि वाला मूर्ख अगाध कीचड़ से भरे हुए संकट में गिरा दिया जाता है।

ऋषि वाल्मीकि जी ने वाल्मीकि रामायण में श्रीराम के जीवन को दृष्टान्त कर मनुष्यों को यह ज्ञान दिया है कि विद्वान् सुख–दु:ख को स्वयं के ही किए कर्मों का फल जानते हैं– मानते हैं। फलस्वरूप सुख–दु:ख में एक समान होकर, आनन्द मग्न हुए धर्म से विचलित नहीं होते। वैदिक ज्ञानयुक्त कर्मफल के विषय में वाल्मीकि रामायण के अरण्यकाण्ड में जो वर्णन है, ऐसा वर्णन पृथिवी पर अन्य कहीं नहीं दिखाई देता, जिसमें कहा कि जब सीता जी की खोज में श्रीराम अपने भ्राता लक्ष्मण सहित वन–वन भटक रहे थे तब श्रीराम ने लक्ष्मण जी से अत्यन्त मार्मिक वचन कहे– ***''हे लक्ष्मण! मैं समझता हूँ इस भूमण्डल पर मेरे समान दुष्कर्म करने वाला पापी पुरुष और कोई नहीं है क्योंकि एक के पश्चात् एक दु:खों की अविच्छिन्न परम्परा निरन्तर मेरे हृदय और मन को विदीर्ण किए डालती है।''***

श्रीराम आगे कहते हैं कि ''पूर्वजन्म में निश्चय ही मैंने एक के पश्चात् एक यथेष्ट पाप किए हैं, उन्हीं पापों का फल आज मुझे प्राप्त हो रहा है और मेरे ऊपर दु:ख के ऊपर दु:ख आ रहे हैं।''

जब आगे उन्होंने द्विजातियों में श्रेष्ठ, रक्त से सने हुए, भूमि पर पड़े जटायु जी को देखा और उनसे सत्य जाना कि सीता जी को तथा जटायु जी के प्राणों को राक्षस राज रावण हर के ले गया है, तब श्रीराम के ज्ञान वर्धक वचनों का अवलोकन करें– ***''मैं राज्य से त्याग दिया गया हूँ, वन में वास कर रहा हूँ, सीता का अपहरण हो गया तथा मेरे ही कारण तपस्वी जटायु मारे गए। यह मेरे खोटे कर्मों (प्रारब्ध) का ही परिणाम है। यदि आज मैं अपने सन्ताप की शान्ति के लिए समुद्र में भी कूदूँ तो वह मेरे खोटे कर्मों के कारण सूख जाएगा।''***

जो उत्तम कर्म, उपासना एवं ज्ञान में यत्न करता है, वह देव है– यजु० 31/17

कहने का भाव है कि

ईश्वर को वेदों में जो अर्यमा-न्यायकारी कहा है,
जो अपने नियमों पर अटल है

और किए हुए कर्मों का फल देता है तो हम क्यों अपनी नियति, ईश्वर, समय (काल) को कोसते हैं?

व्यासमुनि कृत महाभारत ग्रन्थ में भीष्म पितामह युधिष्ठिर को कर्मों का रहस्य समझाते हुए कहते हैं–

१. काम–क्रोधादि दोषों से युक्त बुद्धि की प्रेरणा से मन पाप कर्म में प्रवृत्त होता है। इस प्रकार मनुष्य अपने ही कर्मों द्वारा पाप करके नीच योनियों में गिराया जाता है।

२. जिस–जिस मनुष्य ने जैसा कर्म किया होता है, वह उसके पीछे लगा रहता है। यदि कर्मकर्ता शीघ्रतापूर्वक दौड़ता है तो वह भी उतनी ही तेज़ी के साथ उसके पीछे दौड़ता है। जब वह सो जाता है तो उसका कर्मफल भी उसके साथ सो जाता है। जब वह खड़ा होता है तो वह भी पास ही खड़ा रहता है और जब मनुष्य चलता है तो वह भी उसके पीछे–पीछे चलने लग जाता है। इतना ही नहीं, कोई कार्य करते समय भी कर्म–संस्कार उसका साथ नहीं छोड़ता, सदा छाया के समान पीछे लगा रहता है।

३. जिस–जिस मनुष्य ने अपने–अपने पूर्वजन्म में जैसे–जैसे कर्म किए हैं, वह अपने किए हुए उन कर्मों का फल अकेला ही भोगता है।

४. अपने–अपने कर्म का फल एक धरोहर के समान है, जो कर्म जनित अदृष्ट के द्वारा सुरक्षित रहता है। उपयुक्त अवसर आने पर काल (समय) इस कर्मफल को प्राणीवर्ग के पास खींच लाता है।

५. जैसे फूल और फल किसी की प्रेरणा के बिना ही अपने समय पर वृक्षों में लग

जाते हैं, उसी प्रकार पहले के किए कर्म भी अपने फल भोग के समय का उल्लंघन नहीं करते।

६. सम्मान एवं अपमान, लाभ और हानि तथा उन्नति एवं अवनति– ये पूर्वजन्म के कर्मों के अनुसार बार–बार प्राप्त होते हैं और प्रारब्ध भोग के पश्चात् निवृत्त हो जाते हैं।

७. दु:ख अपने ही किए हुए कर्मों का फल है और सुख भी अपने ही पहले किए हुए कर्मों का परिणाम है। जीव माता की गर्भशय्या में आते ही पूर्व शरीर द्वारा उपार्जित सुख–दु:ख का उपभोग करने लगता है।

८. जैसे बछड़ा सहस्रों गौओं में से अपनी माँ को पहचान कर उसे पा लेता है, वैसे ही पहले का किया हुआ कर्म भी अपने कर्ता के पास पहुँच जाता है।

कर्म विषय की गहराई को समझाते हुए ***योगीं राज स्वामीं राम स्वरूप जीं***, महाराज भी कहते हैं कि दोषी किसी भी छल–कपट का सहारा लेकर चाहे संसार की हर अदालत से सज़ा पाने से बच जाए परन्तु ईश्वर, जो अर्यमा/न्यायकर्ता है, उसकी अदालत से बचना असम्भव है और उसे पाप फल की सज़ा अवश्य मिलती है।

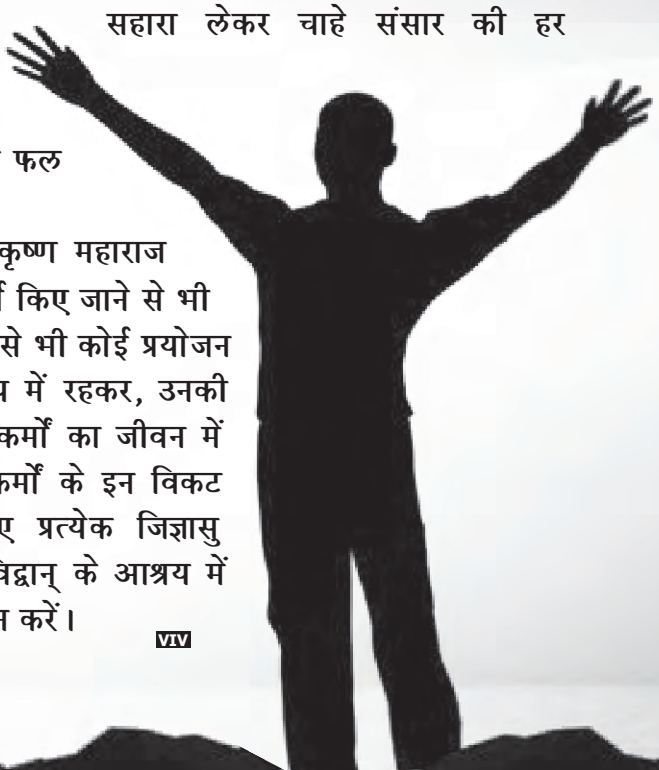

भगवद्गीता श्लोक 3/18 में श्रीकृष्ण महाराज कहते हैं कि इस संसार में मुक्त योगी का कर्म किए जाने से भी कोई प्रयोजन नहीं है और कर्म ना किए जाने से भी कोई प्रयोजन नहीं है। अत: ऐसे मुक्त योगियों के आश्रय में रहकर, उनकी कृपा से ही कर्मों का रहस्य जानकर, शुभ कर्मों का जीवन में आचरण किया जाता है। अत: कर्मों के इन विकट रहस्यों को समझने के लिए प्रत्येक जिज्ञासु नर–नारी वेद के ज्ञाता, विद्वान् के आश्रय में रहकर वेदों का अध्ययन करें।

VIV

संयमी, सत्यवादी परम सुख भोगते हैं– महाभारत अनु. पर्व

वेदान्त और ब्रह्मवाद

आचार्य विद्याभानु शास्त्री
जम्मू

वेदान्त का अर्थ है – वेद का सिद्धान्त।
महर्षि वेद व्यास (कृष्ण द्वैपायन) ने वेद का अध्ययन करके जिन आध्यात्मिक तत्त्वों का विवेचन किया है उन्हीं तत्त्वों का नाम 'वेदान्त दर्शन' है, जिसे ब्रह्मसूत्र के नाम से भी जाना जाता है। वेदान्त दर्शन का प्रथम सूत्र है:

''अथातो ब्रह्म जिज्ञासा''

अब इसके पश्चात् ब्रह्म को जानने की इच्छा है। प्रश्न है कि ब्रह्म को जानने की इच्छा किसको है?स्वाभाविक है कि ब्रह्म को तो ब्रह्म को जानने की इच्छा होगी नहीं क्योंकि वह तो स्वयं वही है। निश्चय ही ब्रह्म के अतिरिक्त यह कोई और ही होगा, जिसे ब्रह्म को जानने की इच्छा है। ब्रह्म के अतिरिक्त एक और भी चेतन सत्ता है जो कि अल्पज्ञ है क्योंकि ब्रह्म तो सर्वज्ञ है उसे और क्या जानने की इच्छा है?निश्चय ही ब्रह्म के अतिरिक्त कोई और सत्ता है जो ब्रह्म के जानने की इच्छुक है। प्रकृति जड़ है उसमें चेतना नहीं इसलिए उसमें जानने की इच्छा सम्भव नहीं। निश्चय की वह कोई तीसरी सत्ता है जिसे ब्रह्म को जानने की इच्छा है।

जगत् की रचना के कारण ईश्वर, जीव और प्रकृति हैं। ईश्वर जगत् की रचना करता है, प्रकृति से करता है और जीवों के लिए करता है। यह वैदिक सिद्धान्त है इसे विद्वान् लोग ***'त्रैतवाद'*** के नाम से पुकारते हैं। इसी 'त्रैतवाद' को ऋग्वेद में एक अत्यंत रुचिकर उदाहरण के द्वारा व्यक्त किया गया है:—

''द्वा सुपर्णा सयुजा सखाया
समानं वृक्षं परिषस्वजाते।
तयोरन्यः पिप्पलं स्वादु अत्ति,
अनश्नन् अन्यो अभिचाकशीति।''
ऋग्वेद

अर्थात् — दो सुन्दर पंखों वाले पक्षियों का जोड़ा है जिन्होंने एक वृक्ष को अपने आलिंगन में लिया हुआ है, उनमें से एक उस वृक्ष के फलों का स्वाद ग्रहण कर रहा है और दूसरा साक्षी बनकर न खाता हुआ अपनी सत्ता में स्थिर है।''

वेद का अभिप्राय है कि वृक्ष 'प्रकृति' है, दोनों पक्षी जो उस वृक्ष पर स्थित हैं, ईश्वर और जीव हैं। जीव प्रकृति द्वारा कर्म करता है और कर्मफल को भोगता है। इस मन्त्र में सुन्दर हृदय ग्राही उदाहरण के द्वारा ईश्वर, जीव और प्रकृति का दृश्य उपस्थित किया है।

नवीन वेदान्ती ब्रह्म और जीव को एक ही मानते हैं—

''श्लोकार्धेन प्रवक्ष्यामि,
यदुक्तं ग्रन्थकोटिभिः।
ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या,
जीवो ब्रह्मैव नापरः।''

अर्थात् जो कुछ करोड़ों ग्रन्थों ने कहा है मैं उसे आधे श्लोक में कह देता हूँ। ब्रह्म सत्य है, जगत् मिथ्या है और जीव भी ब्रह्म ही है इसके अतिरिक्त कुछ नहीं

1. प्रश्न है कि जगत् मिथ्या है और ब्रह्म सत्य है तो सत्य ब्रह्म ने जगत् को मिथ्या (झूठा) क्यों बनाया?और किसके लिए बनाया क्योंकि ब्रह्म भी जीव ही है?
2. यदि जीव भी ब्रह्म ही है तो उसे (ब्रह्म को) जन्म–मरण के बन्धन में आने की क्या आवश्यता है?
3. यदि जीव ब्रह्म ही है तो वेद (ज्ञान) की रचना किसके लिए है क्योंकि ब्रह्म तो सर्वज्ञ है।
4. यदि ब्रह्म के अतिरिक्त जीव नहीं है तो मोक्ष प्राप्ति के लिए योग–साधना और समाधि की क्या आवश्यकता है?

चिन्तन करें कि यदि एक मात्र ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ भी नही तो 'वेदान्त दर्शन' के निम्नलिखित सूत्रों की रचना का उद्देश्य क्या है?

1. ***जन्माद्यस्य यतः।***
2. ***शास्त्रयोनित्वात्***
3. ***द्युम्वाद्यतनं स्वशब्दात्।***

जीव ब्रह्म का ऐक्यवाद और जगत् मिथ्यावाद व्यास के वेदान्त सूत्रों में और वेद में नहीं है। ब्रह्म, जीव और जगत् तीनों एक नहीं है। महर्षि व्यास ने वेदान्त दर्शन के अनेक सूत्रों में ब्रह्म और जीव की भिन्नता का प्रतिपादन किया है:

''नेतरोऽनुपपत्तेः''

ब्रह्म से इतर जीव सृष्टि कर्त्ता नहीं है, अल्पज्ञ, अल्प सामर्थ्य जीव में सृष्टि कर्त्तृत्व नहीं घटता इसलिए जीव ब्रह्म नहीं है।

''अनुपपत्तेस्तु न शारीरः''

क्योंकि ब्रह्म के गुण, कर्म, स्वभाव जीव में नहीं घटते इसलिए शरीर धारी जीव ब्रह्म नहीं है।

''अन्तर्याम्यधि देवादिथु तद् धर्मव्यपदेशात्''

पृथिवी आदि देवों, सब जीवों आदि में परमेश्वर अन्तर्यामी रूप से स्थित है। वेदान्त के अनुसार ब्रह्म आनद स्वरूप है किन्तु जीव आनन्द का इच्छुक है:–

''आनन्दमयो ह्यभ्यासात्''

अभ्यास के द्वारा ही जीव को आनन्द की प्राप्ति सम्भव है। परमेश्वर आनन्द स्वरूप है। जीवात्मा में आनन्द प्राप्ति की कामना पाए जाने से जीव आनन्दस्वरूप नहीं है। जिसके पास जिस वस्तु का अभाव होता है वह उसकी इच्छा करता है। इसलिए:–

''यत्रानन्दाश्च मोदाश्च मुदप्रमुद आसते।
यत्राप्तकामाः तत्र मामृतं कृधि।

वेद इसका साक्षी है कि जीव आनन्द को चाहता है। यही कारण है कि वह ईश्वर से उसके लिए प्रार्थना करता है जो जीव के पास नहीं है।

ब्रह्म एक है इसीलिए समस्त संसार के

आस्तिक ग्रन्थों में ईश्वर के लिए एकवचन का ही प्रयोग किया गया है किन्तु जीव तो असंख्य हैं।

ईश्वर के एक होने में प्रमाण:—

1. ***''महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।''***
2. ***''भर्गो देवस्य धीमहि''***
3. ***''विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव यद् भद्रं तन्न आसुव।''***
4. ***''स नः पितेव सूनवेऽग्नेसूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये।''***

केवल कुछ वेद मन्त्रों को प्रस्तुत किया है जिनमें ईश्वर के एकत्व और जीव के अनेकत्व के सूचक शब्दों को सम्मिलित किया गया है, लेख के विस्तार भय से हमने मन्त्रों के अर्थ नहीं लिखे हैं। प्रबुद्ध पाठकों के लिए केवल संकेत मात्र हैं।

इस प्रकार वेद में असंख्य प्रमाण उपलब्ध हैं जो ब्रह्म और जीव के एक होने का खण्डन करते हैं। पाठक गण अधिक जानकारी के लिए वेद और ऋषिकृत ग्रन्थों का अध्ययन करें। अधिक नहीं, तो यजुर्वेद का चालीसवां अध्याय अवश्य ही पढ़ लेवें।

संपादक के विचार

श्री विद्याभानु शास्त्री जी ने ***''वेदान्त एवं ब्रह्मवाद''*** — इस विषय पर लिखकर पाठकों को उत्तम ज्ञान देने का प्रयास किया है, जो परमावश्यक है। इसके लिए मैं उन्हें धन्यवाद देता हूँ। ***''वेदान्त''*** शब्द वर्तमान में अत्याधिक प्रचलित हैं। इसका चिन्तन अति आवश्यक है। शास्त्री जी के लेख से प्रेरित हो मैंने भी इस विषय में अपने कुछ विचार लिखने प्रारम्भ किए।

''विद्–ज्ञाने'' के अनुसार वेद शब्द का अर्थ ज्ञान है अर्थात् वह ज्ञान जो प्रत्येक सृष्टि रचना के आरम्भ में ईश्वर से, चारों वेदों के रूप में, उत्पन्न होता है।

मनु भगवान् ने इस विषय में ***मनु स्मृति श्लोक 1/23*** में कहा—

''अग्निवायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्धयर्थमृग्यजुः सामलक्षणम्।।''

अर्थात् उस परमात्मा ने जगत् में समस्त अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष आदि व्यवहारों की सिद्धि के लिए अथवा जगत् के समस्त रूपों के ज्ञान के लिए अग्नि, वायु, रवि आदि ऋषियों को चारों वेदों का ज्ञान दिया।

यजुर्वेद मन्त्र 31/7 में स्वयं परमेश्वर ने उपदेश किया है कि उस पूर्ण परमेश्वर से चारों वेद उत्पन्न हुए। उसी परमेश्वर को जानो। पुनः स्मरण कीजिए कि वेद का अर्थ तो ज्ञान है और ***'अन्तः'*** पद का भाव है वेद का अन्तिम अध्याय। उपनिषद् को भी वेदान्त कहते हैं। वेदों में आत्मा— परमात्मा अर्थात् ब्रह्म विद्या, भौतिक पदार्थों आदि का अनन्त ज्ञान है। वेदों में तीन विद्याएँ हैं— ज्ञान काण्ड, कर्म काण्ड एवं उपासना काण्ड। वेदान्त अर्थात् वेदों के अन्तिम अध्याय अथवा उपनिषद् में वेदों का सारांश है। छः शास्त्रों में एक शास्त्र वेदान्त शास्त्र है जो ब्रह्म के विषय में उपदेश करता है। कई जगह भ्रांति है कि ये छः शास्त्र एक–दूसरे के विरोधी हैं। ऐसी भ्रांति वेदाध्ययन में आई कमी के कारण हुई है। अन्यथा छः ऋषियों ने छः शास्त्र

अलग–अलग विषयों पर लिखे हैं और ये सभी वेद के तत्त्व ज्ञान को अपने–अपने क्षेत्रों में व्यक्त करते हैं।

जैसे वेदान्त शास्त्र केवल ब्रह्म के विषय में कहता है। जैसा ऊपर शास्त्री जी ने कहा कि वेदान्त शास्त्र का पहला सूत्र है–

''अथातो ब्रह्मजिज्ञासा''

अथ का अर्थ है अनन्तर अथवा अब। भाव यह है कि जीव बहुत सी योनियों में भटकता हुआ, दु:ख उठाता हुआ, ईश्वर कृपा से मनुष्य का शरीर धारण करता है और अब तो उसे ब्रह्म की जिज्ञासा करनी चाहिए। शिष्य पूछते हैं कौन सा ब्रह्म? तो व्यास मुनि जी कहते हैं– ***''जन्माद्यस्य यत:''***

अर्थात् जिस परमेश्वर से समस्त संसार की उत्पत्ति, पालना एवं प्रलय होकर पुन: उत्पत्ति होती है, वह ब्रह्म है। पुन: व्यास मुनि जी ने कहा– ***''शास्त्रयोनित्वात्''***

यहाँ शास्त्र का अर्थ ऋग्वेद आदि चारों वेद हैं। अर्थात् ईश्वर चारों वेदों का कारण है। चारों वेदों का कारण होने से ब्रह्म के अस्तित्व का बोध होता है।

सांख्य शास्त्र प्रकृति के विषय में कहता है। योग शास्त्र अष्टांग योग विद्या के विषय में कहता है। वैशेषिक शास्त्र में कहा–

''अथातो धर्म व्याख्यास्याम:''

अर्थात् अब इस कारण धर्म की व्याख्या करेंगे। महर्षि कणाद के धर्म शब्द से अभिप्रेत हैं छ: पदार्थों की विशेषताएँ। वे पदार्थ हैं– द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष एवं समवाय।

गौतम ऋषि के न्याय दर्शन का मुख्य विषय प्रमाण है। जैमिनि ऋषि के मीमांसा दर्शन का मुख्य विषय स्वाध्याय, अग्निहोत्रम्जुहुयात् इत्यादि द्वारा किया गया है। ***महर्षि जैमिनि*** ने 'समाज धर्म' के विश्लेषण को अपना लक्ष्य बनाया।

परन्तु तिनके से लेकर ब्रह्म तक का ज्ञान, वह तो केवल ईश्वर से उत्पन्न चारों वेदों में ही है, किसी शास्त्र, उपनिषद् आदि में नहीं है। जो शास्त्र और उपनिषद् आदि ब्रह्म विद्या के विषय में उपदेश कर रहे हैं, वे वेदान्त में ही गिने जाते हैं।

अब परेशानी का विषय यह है कि अब वेदान्त शब्द का अर्थ अलग से मत–मतान्तरों के रूप में ग्रहण कर लिया गया है जिसको अद्वैतवाद भी कहा जाता है, जो पूर्णत: वेद विरुद्ध है, क्योंकि वर्तमान के वेदान्त का भाव है–

क. ***अहम् ब्रह्म अस्मि।***

मैं स्वयं ब्रह्म हूँ अर्थात् जीव ही ब्रह्म है जो कि ऐसा होना असम्भव है। जीव एक देशी है, ईश्वर सर्वव्यापक है। जीव जन्म–मृत्यु में आता है, जीव कर्मानुसार सुख–दु:ख भोगता है जब कि परमेश्वर जन्म–मरण और कर्म बन्धन से परे है।

जैसे– ''मेरा मित्र मैं ही हूँ'' में मैं अलग हूँ, मित्र अलग है। इसी प्रकार 'अहम् (मैं) ब्रह्म अस्मि' में अहम् अलग है और ब्रह्म अलग है। अत: मैं ब्रह्म नहीं हो सकता।

ख. ***तत्वम् असि***

का अर्थ है जो सब संसार का परमात्मा है, वह तेरा भी परमात्मा है। इसलिए जीव ब्रह्म नहीं हो सकता।

ग. सर्वम् खल्विदं ब्रह्म

छान्दोग्योपनिषद् श्लोक 3/14/1 के अनुसार जिस ज्योति का पीछे वर्णन किया, ये सब ब्रह्म है। जीव ब्रह्म नहीं।

घ. प्रज्ञानं ब्रह्म

ऐतरेयोपनिषद् श्लोक 3/3 के अनुसार इसका अर्थ है बुद्धि का अधिष्ठाता ही ब्रह्म है।

ये चारों श्लोक उपनिषद् के हैं, वेद के नहीं। परन्तु प्राय: इनको वेद मन्त्र कह कर प्रस्तुत किया जाता है जो कि असत्य है। जहाँ तक ब्रह्मवाद का भाव है तो इस विषय में अथर्ववेद में कहा–

''ब्रह्मवादिनः वदन्ति''

वेद के ज्ञान को जानने वाले प्रश्न करते हैं कि ऐ मनुष्य! तूने ज्ञान के भोजन को खाया है अर्थात् परा विद्या को ही प्राप्त करने का यत्न किया है अथवा अपने सामने उपस्थित इन पदार्थों का अर्थात् अपरा विद्या को ही जानने का यत्न किया है, इत्यादि।

व्यास मुनि जी ने महाभारत में ब्रह्म के दो अर्थ कहे हैं–

1. ***शब्द ब्रह्म***– वेद मन्त्रों का ज्ञान।
2. ***पर ब्रह्म***– अर्थात् शब्द ब्रह्म को जानकर, उस पर आचरण करके ईश्वर की अनुभूति प्राप्त करना। यही मनुष्य जाति का परम लक्ष्य है।

शास्त्री जी ने त्रैतवाद का वर्णन करते हुए ***ऋग्वेद मन्त्र 1/164/20*** का सुन्दर उल्लेख किया है जिसमें कहा कि हे मनुष्यों। जो सुन्दर पंखों वाले, समान सम्बन्ध रखने वाले, मित्रों के समान वर्तमान दो पखेरु; एक जो काटा जाता है, उस वृक्ष का आश्रय करते हैं। उनमें से एक उस वृक्ष के पके फल को स्वाद लेकर खाता है और दूसरा ना खाता हुआ, सब ओर से देखता है।

एक भाव यह है कि जीव और परमात्मा कार्य–कारण रूप ब्रह्माण्ड देह का आश्रय करते हैं। जीव कर्मानुसार मनुष्य का शरीर धारण करता है और कर्म फल भोगता है। परमात्मा शरीर में रहकर जीवात्मा के कर्मों को देखता है और कर्मानुसार उसे अगला जन्म देता है परन्तु स्वयं कर्म नहीं भोगता। अर्थात् जीवात्मा पुण्य–पाप से उत्पन्न सुख–दु:ख भोग को स्वादुपन से भोगता है।

वेद में कई स्थान पर और भगवद्गीता के 15वें अध्याय में मनुष्य शरीर को वृक्ष कहा है। भाव यह है कि वृक्ष काट दिया जाता है या स्वयं नष्ट हो जाता है, इसी तरह शरीर भी नष्ट हो जाता है।

आज मनुष्य ने अनेक परमेश्वर बना लिए हैं। परन्तु चारों वेदों में एक ही परमेश्वर के होने का उपदेश है। ***जैसे अथर्ववेद मन्त्र 13/4/16, 17, 18*** में उपदेश है कि परमेश्वर ना दो, ना तीन, ना चार, ना पाँच, ना छ:, ना सात, ना आठ, ना नौ, ना दस कहा जाता है। परमेश्वर तो एक ही है, इसी परमेश्वर की पूजा करना योग्य है। परमेश्वर से उत्पन्न वेदों में ईश्वर ने स्वयं अपना स्वरूप, गुण, कर्म, स्वभाव प्रकट किए हैं– उनका उपदेश दिया है। ***अतः परमेश्वर को जानने के लिए वेदाध्ययन करने की आवश्यकता अनादिकाल से चली आई है। हमें ईश्वर को जानने के लिए पुनः वेदों की ओर लौटना होगा।*** VIV

ज़िन्दगी दूसरों के भरोसे नहीं जीनी

ऋचा कौशिक
इंजीनियर *(बी.टैक.)*

ईश्वर प्रदत्त यह मानव शरीर अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष प्राप्ति का साधन है। जीवात्माँए तो अनन्त हैं परन्तु जीवात्माओं की संख्या स्थायी/स्थिर है। असंख्य जीवात्माँए कर्मानुसार असंख्य योनियों को प्राप्त करके अपने पिछले जन्मों के किए कर्मों को सुख–दुःख के रूप में भोगती हैं। परन्तु ***यह मनुष्य योनि को ही परमात्मा ने विशेषता दी है कि वे वैदिक मार्ग पर चलकर, दुःखों का नाश करके, जन्म–मरण के चक्र को लांघकर के अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष का सुख प्राप्त करें।*** इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए परमेश्वर ने वेदों में अनन्त ज्ञान दिया जिसे हम वेद के विद्वानों से प्राप्त करते रहें। इस बीच मुझे मुगल राजा नादिर शाह का एक विचार अच्छा लगा जिसे मैं यहाँ प्रस्तुत कर रही हूँ।

मुगल शासन काल में नादिर शाह एक क्रूर एवं आक्रांत राजा के नाम से जाना जाता है। उसमें स्वावलम्बन का गुण था। राजा बनने से पहले वह बादशाह मोहम्मद शाह रंगीले का सेनापति था। एक बार मोहम्मद शाह रंगीले ने नादिर शाह को हाथी पर सैर करानी चाही। नादिर शाह पहले कभी हाथी पर नहीं बैठा था। हाथी पर महावत बैठा था। सेनापति नादिर शाह ने कहा– ''तू यहाँ क्यों बैठा है? हाथी की लगाम मुझे देकर नीचे उतर जा।''

महावत ने डरते– डरते सेनापति से विनती की– ''महाराज हाथी की लगाम नहीं होती। गुस्ताखी माफ़ करें– इस हाथी को हम महावत ही चला सकते हैं।''

नादिर शाह ने कहा– ***''जिस हाथी की लगाम मेरे हाथ में नहीं, मैं उस पर नहीं बैठ सकता। मैं अपनी ज़िन्दगी दूसरों के हाथों में देकर खतरा मोल नहीं लूंगा।''*** यह कहते ही नादिर शाह हाथी से कूद गया। भाव यही है कि हमें स्वयं अपने आप पर भरोसा होना चाहिए। हम इस बहुमूल्य जीवन को किसी अन्य के हाथों सौंप कर स्वयं आलस्य युक्त ना हो जाएँ। इसलिए वेदों से हम नित्य नवीन–नवीन ज्ञान, कर्म और उपासना युक्त विद्या प्राप्त करके उस पर आचरण करें।

इसके लिए हम ईश्वर की प्रार्थना, उपासना और स्तुति नित्य करें और तदानुसार पुरुषार्थ करें। आलस्य का सदा त्याग करें।

VIV

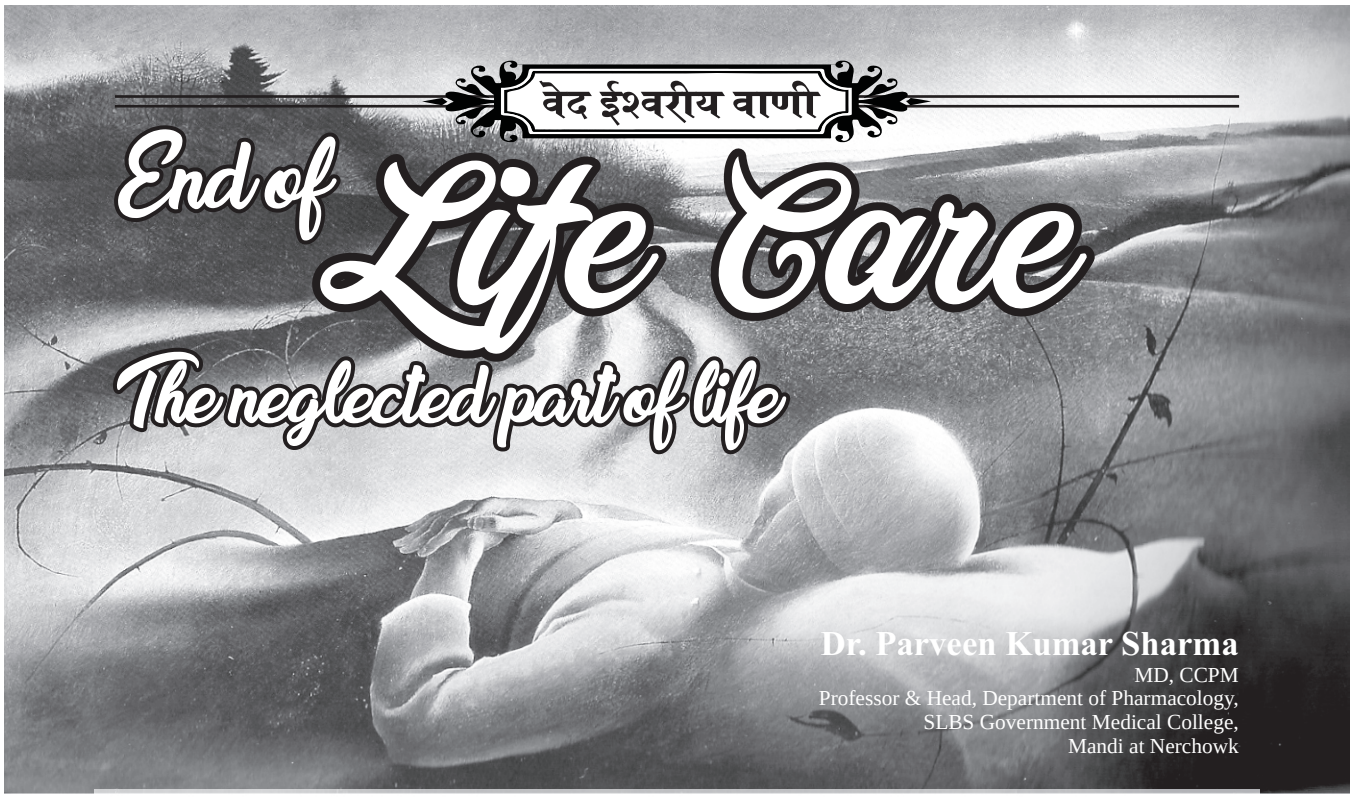

वेद ईश्वरीय वाणी

End of Life Care

The neglected part of life

Dr. Parveen Kumar Sharma
MD, CCPM
Professor & Head, Department of Pharmacology,
SLBS Government Medical College,
Mandi at Nerchowk

I was taught by my teachers in my primary school that like life death is also a truth. Since then I have learnt a lot about life and death through reading of scriptures and listening to great experts of the field and respected Gurus. Compared to my childhood days the mediums of knowledge and transportation have increased tremendously, people today have much more access to great Gurus and exposure to information but to me they appear lesser prepared for death than they were in the past. Both, the one who is dying and those who are left behind appear to be caught by surprise and behave unexpectedly in this moment of truth. To a large extent the medical science and teachings are also responsible for this. ***Doctors are trained to handle issues related to life and diseases but they feel helpless in the eventuality of death because no such subject is taught to them.*** I strongly believe that caring for a dying person is the responsibility of the society and not the doctors or hospitals because of several reasons. One is, doctors are not trained in that and second and more important reason is that hospitals should be left for taking care of the people suffering from curable diseases rather than making them mortuaries. If a society wants better cure for diseases, it will have to take care of its dying people. Even if we are able to have hospitals for dying people it s a disservice to the departed soul to force him/her to stay in hospital in his/her last days

Believe in creator, not creation in the matter of faith- Swamiji.

when he/ she should have been among his near and dear ones. ***So a complete and caring society should be aware of end of life care and this subject should be an integral part of its teachings right from childhood.***

Death has mesmerised, attracted and confused mankind right from the early days when the primitive man started developing the skills of reasoning in Palaeolithic era. Since then various philosophers have described it in many ways.

1. What is your life? You are a mist that appears for a little while and then vanishes. ***James***
2. Each man's life is but a breath. ***Psalms***
3. A punishment to some, to some a gift, and to many a favor. ***Seneca***
4. Death is one of two things. Either it is annihilation, and the dead have no consciousness of anything; or, as we are told, it is really a change: a migration of the soul from one place to another. ***Socrates***
5. Life is pleasant. Death is peaceful. It's the transition that's troublesome. ***Isaac Asimov***
6. Ancient Egyptians believed that upon death they would be asked two questions and their answers would determine whether they could continue their journey in the afterlife. The first question was, "Did you bring joy?" The second was, "Did you find joy?" ***Leo Buscaglia***
7. According to Vedas, Death is a journey of soul from one body to another. **When people are enquired about their understanding of death, we get any one of the following answers:**

An end?	A transformation?
Don't know?	Not thought about it

God preaches to follow truth and leave falsehood- Vedas.

For deciding the care of dying person we need to first decide the death scientifically and rationally. A large majority of us consider death as the end of life or the cessation of life. So definitions of death ultimately depend upon the definition of life, upon which there is no consensus. Another definition of death is ***'The permanent cessation of all vital bodily functions'.*** This definition depends upon the definition of "vital bodily functions." One more way of defining death is ***"The cessation of all vital functions, traditionally demonstrated by an absence of spontaneous respiratory and cardiac functions",*** this is the common law standard for determining death .

Now we must understand about the timings of end of life care. Is it Palliative Care in general. Is it care in last year or last 6 months. Is it care in the last 2-3 days. There is no fixed answer to this question but according to General Medical Council of United Kingdom (GMC-UK) and endorsed by Gold Standard Framework (GSF) and The National Institute for Health and Care Excellence (NICE), patients who are likely to die within the next 12 months need End of Life Care. This includes patients whose death is imminent (expected within a few hours or days) and those with:

- ❖ advanced, progressive, incurable conditions
- ❖ general frailty and co-existing conditions that mean they are expected to die within 12 months
- ❖ if they are at risk of dying from a sudden acute crisis in their existing condition
- ❖ life-threatening acute conditions caused by sudden catastrophic events GSF is a framework to deliver a ***'gold standard of care'*** for all people nearing the end of life. ***'It's about living well until you die'.*** It assesses their needs, symptoms and preferences and plan care on that basis, enabling patients to live and die where they choose. It helps clinicians identify patients in the last year of life.'Surprise question' method of identifying end of life is asking the question, would you be surprised if this patient were to die- In the next 6 months, 3 months, Weeks , days ?

These are the results of an online survey conducted by British Medical Journal in 2008 in which more than 4 000 people voted, to decide which of the following six projects would make the most improvement to patient care.

Palliative care for all at the end of life	- 38%
Combating drug resistant infections in the developing world	- 22%
Better care for the elderly with multiple health problems	- 17%

Improving chronic pain management	- 12%
Reducing excessive drinking in young women	- 8%
Helping to reduce adverse drug reactions in the elderly	- 3%

We can see that even society believes that end of life care is an important issue of present times. But according to a reputed medical journal 'Lancet' (31st March 2012), despite several reports and guidelines over the past few years on the importance of managing end-of-life care, knowledge and confidence among hospital doctors is still far from ideal when looking after those in the last few days, weeks, months, or even years of their lives.

Among patients suffering from Cancer- 20% are helped by curative treatment, in end stage renal disease - 6% are helped by transplant and among HIV /AIDS patients – around 30% are helped by antiretroviral therapy. In all these situations the need is for good comprehensive care, including Palliative care, throughout the entire course of the illness.

According to a study from the ***Dana-Farber Cancer Institute;*** Harvard Medical School by Alexi A. Wright et al in Journal of Clinical Oncology 2010, Volume 28(29):

Patients with cancer who die in a hospital or Intensive Care Units (ICU) have worse Quality of Life (QoL) compared with those who die at home, Their bereaved caregivers are at increased risk for developing psychiatric illness.

If terminal hospitalizations are decreased, it may enhance patients' Quality of Life **(QoL)** at the End of Life **(EOL)**. Also minimizes bereavement-related distress.

Throughout our life, we all keep making efforts for "good life for ourselves and for our loved ones". Very few people ever think of "GOOD DEATH".

This may appear a self contradictory term but the concept of "Good Death" is becoming increasingly acceptable. For a member of a society, life cannot be considered good if the person have had a painful death. This pain may be of several types, physical, emotional or spiritual. ***So, what is a "Good Death"?*** The essential components of a "Good Death" are:

Awareness of approaching death: This is an important element of good death. Normally it is seen that family members want to hide the diagnosis of a terminal illness from the dying elderly person. It is a wrong practice and the diagnosis of such illness should be communicated to the person as early as possible.

Knowledge of what to expect in the dying process: The dying person should

be informed with more or less certainty about the events prior to death. The events will vary according to the illness that is leading to death. Even if a person is dying without any obvious illness, the events prior to death may be predicted based on previous experience.

Communication: The person nearing death should have someone available all the time to share ideas. There should be regular communication with the patient (where possible) and always with family and loved ones.

Spiritual and Emotional Care: There should be provision of spiritual care for the patient and the family. The type of spiritual help is to be decided by the family in consultation with the patient.

Autonomy: The person should have complete freedom to take decisions about his/ her life. This necessarily includes the freedom to select the type of care and place of death.

Completing unfinished business: This is most important part of a protocol. The person may have legal work regarding property or it may be some other personal work like meeting someone or visiting some temple or performing some Yajna etc.

Optimal treatment (Not to hasten or prolong death): The stress is on the word optimal. It should be planned by a team comprising of patient, doctor and caregiver with patient being the ultimate decision maker. The person nearing death should be made aware of all choices available before deciding. Most important aim of treatment should be to keep the dying person symptom free and comfortable.

Opportunity to say goodbye to loved ones.
Dignified and respectful care after death.

During end of life phase there is increasing weakness, immobility, loss of interest in food, drink and surrounding. There is difficulty in swallowing and drowsiness. With an incurable and progressive illness, this phase can usually be anticipated. Sometimes deterioration is sudden and distressing but priority now is control of symptoms – for comfort and support to family, nature of primary illness now less important. Levels of anxiety, stress and emotion is high for patients, families and other carers. Healthcare team must adopt a sensitive yet structured approach. Terminal phase is defined as Period when day to day deterioration, particularly of strength, appetite and awareness are occurring

Symptoms/ Physical signs during end of life

- Pain
- Agitation /confusion /seizures
- Shortness of breath / Death rattles
- Dry mouth / Stomatitis
- Constipation / Faecal impaction /spurious diarrhoea
- Difficulties in micturition / Distended bladder/urinary incontinence
- Immobility
- Pressure sores
- Profound weakness/gaunt appearance;
- Poor concentration /drowsiness /disorientation;
- Diminished oral intake/difficulty taking oral medication;
- Skin color changes/temperature changes.

Percentage incidence of common symptoms/ Incidences during terminal phase

- Asthenia (Extreme weakness) (82%)
- Noisy-moist breathing (45-56%)
- Restlessness (42-52%)
- Pain (26-99%)
- Dyspnoea (Breathlessness) (17-47%)
- Nausea and vomiting (13-71%)
- Muscle twitching (12%)
- Confusion (9-68%)
- Urinary symptoms (4-53%)

The family members of the dying person should be well aware of these symptoms/ events and methods to handle them so that the levels of anxiety remain under control and the un-necessary visits to the physician are avoided.

Further Insight by the Editor

Dear son, Dr. Parveen Sharma, is Professor and H.O.D. Pharmacology, SLBS Government Medical College, Mandi (H.P.). He has several good qualities like being learned, brilliant, honest, merciful, social worker and hard-working etc. In addition, I would like to state the conclusion of ***Vedas*** that a person should get progress simultaneously in both worldly (science, deeds, duties) matters as well as spiritualism (worship). Dr. Parveen Sharma follows the same perfectly. I bless him heartily to get success at every step of his life. ***He has really chosen a sensitive***

subject about the time of a person's end of life when the patient earnestly needs sympathy, affection, favour and company of his nears and dears. On the contrary, mostly he is left alone awaiting death. His article is extremely outstanding and the principles raised by Dr. Parveen regarding time of death are beyond medical science and very heart-touching.

Really, this was not our India but Oh! We have destroyed our eternal culture so badly that there is no scope left in our lives to shower mercy, affection and to know and discharge our duties faithfully etc., in respect of patients in question.

In the absence of knowledge, we are actually not aware of the fact that the above quoted sins of leaving the patient alone at pitiable state etc. are not excused and God punishes the defaulters at appropriate time.

Here, I remember a story. *That there was a young person whose old father was suffering from diseases and mother had already died. Both, the young son and his wife used to treat him badly. They used to think about the old person as if he had become an obstacle in their daily lives. Couple also had about six years' old child also. One day, the young man made a plan and accordingly he told his father that he (his son) is taking him to the banks of river for taking bath.*

Young man along with his father and his six years' old son reached at the banks of river. The young man made his father to sit at a place. Thereafter he made a wooden raft there. Then he made his father to lie down on the raft and what a surprise that using ropes, son tied his father properly with the raft. In between, his six years' old son asked his father that what was he doing? Father answered that now I will push the raft in water so that your grandfather may enter the deep water of river to attain peace and salvation. The six year old son became very happy and with a laugh he replied to his father that Oh! Father when you will be an old man like my grandfather, I will deal with you in the same manner as you are dealing with your father. Young man was shocked and immediately he released his father from the wooden raft and brought him back in the house and started his services towards father properly. So, please recollect about, "Tit for Tat".

The above story provides us with a lesson that in the Vedic culture, there is no scope to insult the parents, so the defaulter is always punished by God. So, everybody must serve parents whole heartedly as preached by God in Vedas.

The quotes given by Dr. Parveen ji are extremely outstanding and are earnestly required to be held in life. All of a sudden, I remember here about, eternal vedic culture and its fundamental laws that knowledge is only gained when it is

given by someone. Basically, the knowledge is Ved which gives unlimited knowledge all about the worldly matters, form of deeds, worship (i.e. right from blade of grass to Almighty God) in the beginning of every creation. Therefore, you see, the whole of the world deals with vedic knowledge only in their daily lives. I mean to say the reflection of vedic fundamentals is also being seen in these quotes as briefed below-

1.) Vedic views appear in quote number 5 of Isaac. In this connection, ***Yajurved mantra 40/14*** states- ***"AvidyayaaMrityumTeertva"*** i.e., by means of hardworking of physical body, which is non-alive matter (i.e. listening of Vedas, daily performance of Yajyen, name jaap, practice of AshtangYog Philosophy, under the guidance of learned acharya of vedas as well as discharging of all moral duties towards family and nation), the soul attains and follows the knowledge then the stage of bearing sorrows and fear of death is crossed.

It means Vedas also accept that if an individual in whole of his life does not worship God properly, he feels acute sorrows at the time of his death whereas the learned crosses over the same.

2.) ***Rigved Mantra 10/51/1*** states that when the soul enters the womb of mother, he is blessed with vital airs (respiratory system) immediately. The same idea has been stated by Psalms that life is breath. So, to gain the breath by soul in body is life and stoppage of breathing is death.

3.) Keeping in view the statement of Socrates at ***number 4, Rigved mantra 1/24/2 states "Sa Naha Punaha Daat"*** i.e. God gives us Rebirth and ***Bhagwad Geeta shloka 2/22*** states :- Just as a man changes his old clothes and takes new ones, similarly soul leaves old human body and gets new one i.e. Punarjanam (rebirth).

4.) Regarding quote number 3 of Seneca, in this connection, the preach of ***Rigved mantra 10/135/1, 2*** is this that soul takes new birth to face the result of previous good or bad deeds, in the shape of pleasure (gift) and sorrows (punishment).

In the end, I appeal to all people to comply by the guidelines given by Dr. Parveen ji in his valuable article.

The best pious intellect is a pilgrimage- Yajurved Mantra 4/11.

पी.आर.मेहरा
रिटायर्ड अध्यापक
(के.वी., योल)

प्रत्येक मनुष्य किसी भी क्षण कर्म किए बिना नहीं रह सकता क्योंकि मनुष्य द्वारा किए गए अच्छे व बुरे कर्मों का फल ईश्वर उसे देता है, यह ईश्वर का अटल नियम है कि किया गया कर्म कभी निष्फल नहीं हो सकता। कर्म फल महान् है। प्रत्येक मनुष्य का अगला जन्म उसके द्वारा किए गए शुभ–अशुभ कर्मों पर ही निर्भर करता है।

सारे शुभ कर्म वेदों से ही निकले हैं क्योंकि वेद ईश्वर से निकले हैं। जब मनुष्य शुभ–शुभ कर्म ही करता है तो मानो वह ईश्वर का, वेदों का आदर, मान–सम्मान कर रहा है। वेदों में ईश्वर ने असंख्य कर्म बताए हैं। जो मनुष्य, साधक, सेवक गुरु के और ईश्वर के वचनों को सुनकर उन पर आचरण करता है, वही धन्य है क्योंकि ***''कर्म–फल''*** महान् है, इसलिए मनुष्य दु:ख में सदा शान्त रहे। अगर मनुष्य ईश्वर के लिए मन में शुभ संकल्प लेकर नित्य साधना, योगाभ्यास, नाम स्मरण, अग्निहोत्र और यज्ञानुष्ठान आदि कर्मों को करता है तो परम पिता परमात्मा उसी वक्त मनुष्य की सुनता है और उसका कर्मफल मनुष्य को शान्ति व सुख देता है। इसलिए मनुष्य हमेशा शुभ–शुभ कर्म ही करे।

मनुष्य जब यह जान जाता है कि सारे कर्म वेदों से और वेद ईश्वर से निकले हैं तब वह सदा वेदोक्त शुभ कर्म ही करता है। इसलिए ईश्वर मनुष्यों को उपदेश दे रहा है कि हे मनुष्य! तू नित्य यज्ञ कर क्योंकि मैं (ईश्वर) यज्ञ में ही प्रतिष्ठित होता हूँ। मनुष्य सदा अपने किए कर्मों को निश्चित करे। इसके लिए सदा योगी, सिद्ध पुरुषों से वेद सुने। वेद ही तो सब कर्मों का आधार हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता श्लोक 3/15 में श्रीकृष्ण महाराज अर्जुन को उपदेश दे रहें हैं कि हे अर्जुन – (कर्म) कर्म को (ब्रह्म+उत्+भवम्) वेद से उत्पन्न हुआ (विद्धि)

वेद आधारित जीवन

जान और (ब्रह्म) वेद (अक्षर+सम्+उत्+भवम्) अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न हुआ है। इसलिए वह सर्वव्यापक परमात्मा सदा ही यज्ञ में प्रतिष्ठित है।

मनुष्यों द्वारा किए गए शुभ–अशुभ कर्मों का फल उसको अवश्य भोगना पड़ता है। कर्म फल भोगने हेतु ही मनुष्य को बार–बार जन्म लेना पड़ता है केवल यज्ञ रूपी कर्म ही मनुष्य को कर्म बन्धन के फल से मुक्त कर सकता है। अत: हम ***यजुर्वेद मंत्र 1/1*** के अनुसार किसी वेद के ज्ञाता विद्वान् आचार्य के आश्रय में रहकर वेद सुनें एवं नित्य अग्निहोत्र/यज्ञ करें।

वस्तुत: बिना भोगे कर्मबन्धन से मनुष्य छूट नहीं पाता क्योंकि उसके मन, बुद्धि आदि रज, तम व सत् गुणों से ओत–प्रोत रहते हैं और वह निरन्तर साधना, यज्ञ, नाम–स्मरण आदि शुभ कर्म नहीं कर पाता। अत: मनुष्य को कभी भी पापयुक्त कर्म नहीं करना चाहिए अगर उसे अपने जीवन में सुखी रहना है।

संपादक के विचार

यजुर्वेद मंत्र 7/48 में उपदेश है कि इस संसार में मनुष्य कर्म करता है तदानुसार ईश्वर उस कर्म का फल देता है। इस प्रकार ईश्वर की आज्ञा है कि मनुष्य वेदमार्ग पर चले तथा विचारपूर्वक धर्म (कर्तव्य–कर्म) करने की ही कामना करे किन्तु अधर्म की कामना कभी न करे। कर्म के विषय में ***मनु स्मृति श्लोक 2/6*** का यह विचार अवश्य जीवन में धारण करें कि धर्म अर्थात् कर्तव्य–कर्म का उपदेश चारों वेदों से ही प्राप्त होता है। प्रत्येक जिज्ञासु को सब पदार्थों के दाता परमेश्वर की ही कामना करनी चाहिए।

कर्म तीन प्रकार के होते हैं–

1. ***संचित कर्म***– जो जन्म जन्मान्तरों में किए हुए कर्मों का कुल योग हैं।
2. ***क्रियामाण कर्म***– जो इस वर्तमान के जीवन में हम करते हैं।
3. ***प्रारब्ध कर्म***– जो जन्म–जन्मान्तरों के किए हुए कर्मों के समूह से कुछ कर्म लेकर परमेश्वर ने वर्तमान जीवन में प्रारब्ध देकर प्रत्येक जीव को योनि प्रदान की है और भाग्यशाली वही है जिसे मनुष्य योनि मिलती है। मनुष्य योनि में आकर सब मनुष्यों को इन कर्मों का ज्ञान होना चाहिए, इसके किए हम सब वेदमार्ग पर चलें।

वर्तमान जीवन में सुख–दु:ख का आना प्रारब्ध के अनुसार स्वयं के ही किए हुए कर्मों का फल है। अत: वेद–शास्त्रों में ईश्वर ने मनुष्य को सुख–दु:ख में समान रहने का उपदेश दिया है। ज्ञानी तो इस उपदेश को आचरण में लाता है परन्तु वैदिक ज्ञान के अभाव में अविद्याग्रस्त प्राणी सुख में सुख का और दु:ख में दु:ख का अनुभव करके दु:खी रहते हैं अत: जीवन को सुखमय बनाने के लिए वेदमार्ग पर चलकर हम ज्ञानी बनें। ***वेदों में सर्वश्रेष्ठ कर्म यज्ञ को हीं कहा है। अत: मनुष्य यज्ञ की कामना करे और यज्ञ करता रहे।*** VIV

विद्वानों के उपदेश से ही स्तुति परमेश्वर को प्राप्त होती है – ऋग्वेद 10/93/13

Correspondence between Swami Ram Swarup 'Yogacharya' & Late S. Khushwant Singh Ji

(Continued)
(on the subject of Atheism & Casteism etc.)

Original Letter

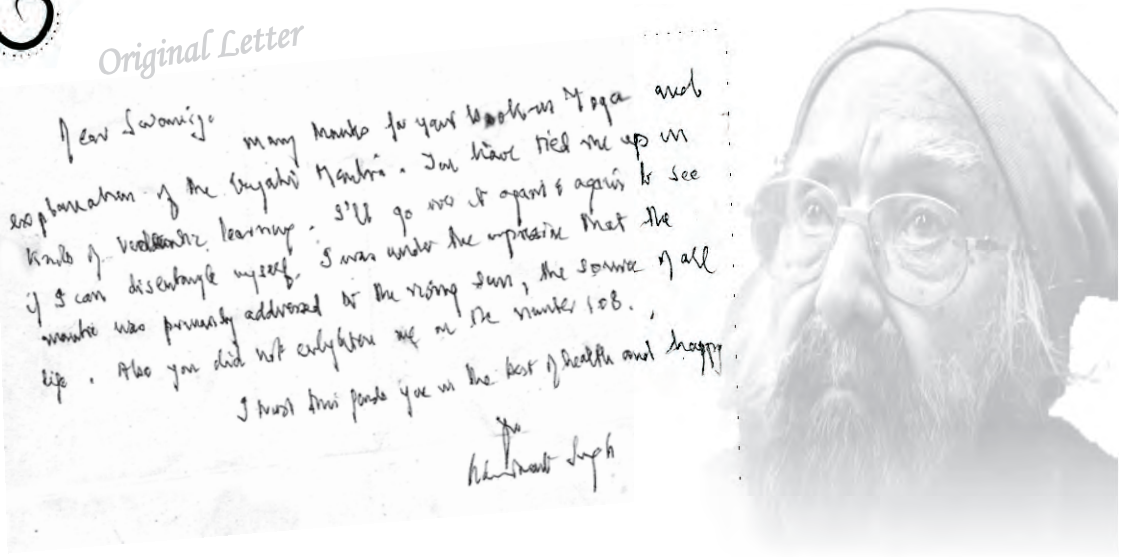

Dear Swamiji,

Many thanks for your book on Yoga and explanation of the Gayatri mantra. You have tied me up in knots of Vedantic learning. I will go over it again and again to see if I can disentangle myself. I was under the impression that the mantra was previously addressed to the rising sun, the source of all life. Also you did not enlighten me on the number 108.

I trust this finds you in the best of health and happy.

Yours
Khushwant Singh

Shri KhushwantSinghji,
E-49, Sujan Singh Park
New Delhi-110003.
Dated-2nd August, 2005,
Respected Shri KhushwantSinghji,
Namaste,

I am truly thankful to your Excellency to honour me for considering my negligible services by such a high dignitary like you for thanks to me. I really feel always a personal pleasure on receiving few beautiful lines from your Excellency and shall ever be waiting for the same.

In vedas, there is a vast description of all matters of universe including sun. For example- in Yajurveda mantra 3/6, it is said, i.e., in Sanskrit,
"AayamGauhuPrishniraKrameedsadanMaataramPurahPitaram Cha Prayantswaha"
Meaning-:-

Made from water and fire, this globe (earth), with attraction revolves around the sun as well as rotation on its axis, in the space.
This process generates time like minutes, hours, days, nights, seasons, bifurcation of earth into northern and southern hemisphere.
Moon and other heavenly bodies also move in their own fixed orbit.

Samved mantra 245 says about sun in which sun is personified as master of a chariot. The ball of sun considered chariot and rays of sun personified as innumerable horses. So, the people wrongly say that a non-alive matter, i.e. sun sitting on its chariot with horses starts his journey from morning and they wrongly worship sun.

Idea of Rigved mantra 1/16/5 is this that as a thirsty deer/animal goes to the bank of river and drinks water, so the rays of sun drink water from the leaves of plants, trees and even from rivers to shower the rain.

So, in all four Vedas, like other non-alive matters including atoms and molecules, the qualities of sun have been mentioned but Gayatri mantra does not say about sun.

The meanings of ved mantras are obtained on observing certain rules. Each mantra has its devta but not self-made sun, moon, air or thirty three crore devtas etc. Here, Devta means subject of the mantra like in English Grammer there is subject and Predicate etc.

Yajurved mantra 4/11 defines the meaning of Tirtha- a place where philosopher/scientist, learned of Vedas, all experienced are sitting and addressing the students/aspirants whereas now people are running to self-made tiraths, baselessly being of no use rather it is a sin because if anyone listens a lie and goes to false places then really it will be sin to bear, being the effect of falsehood.

Vedas say the meaning of alive "Dev/Devta/Devi". Dev or Devi are those who are learned of Vedas, tell truth, have control on all senses and mind, are cooperative, hard workers and are beneficial to society/nation whereas false prophets have made their own meaning of non-alive devtas. In Devtas/Devi categories, learned mother, father, learned guests, Acharya and Almighty God i.e. the said alive dignitaries come and not dead.

Secondly, in Sanskrit, "Saindhav" means 'Salt' and Saindhav also means "horse".

When a master of the house says to servant to bring Saindhav then servant must be learned to follow the correct meaning according to the situation. If house master is going with dress worn in the evening or morning for horse-riding, then he should bring horse and when his master is sitting on dining table then he must bring salt.

Sir, about 108 times, Gayatrijaap, I have already mentioned in my previous letter, dated 23-7-05, in the last line, before my signature, that these numbers like 108 or 1008 etc. are self-made (man-made) and thus not acceptable, being against the eternal philosophy of vedas.

Upto the period of Mahabharat epic, i.e., about 5300 years back, the learning of Vedas was door to door and with the result, there was justice, no corruption, no blind faith, no injustice, no insult of women etc. Yet it had been slightly started from the side of Duryodhan, Shakuni, kanakshastri, Dushasan, for which the Mahabharat war was fought. Thereafter, no learning of Vedas continued and with the result, illusion spread all over the world.

So, I with whole heart, thank you very much to receive your invaluable views for learning Vedas, for which really, I shall remain forever grateful to your Excellency that such a high dignitary will pay his valuable time for the most ancient (though eternal) world's culture of Vedas, even on the scientific ground. I shall feel personal pleasure if I can be of any use for your goodself from here.

Sir, it is added here that I told to dispatch book on Vedanta to your goodself but from your loving letter dated 26th July, 2005, I have come to know that the book on Yoga has been sent to you. So, I am sending herewith two books on Vedanta. Sir, I also sent my man with my book "PatanjalYogDarshanam" (Comments in Hindi) in which my photographs have been published which has been returned by your goodself.

Really, I with whole heart respect your every action considering the same as your utmost pious mood of such a high learned philosopher of the world. I always wish long, happy life for such a high dignitary.

I beg to remain always yours sincerely and thanking you a lot for giving your valuable time to reply again and again. Awaiting your valuable comments on above books.

Yours
Swami Ramswarup.

Sir, I am sending this page separately quoting eight proofs. To come to the truth in case of any matter, there are eight proofs to be produced in the world by the learned-

1.) PratyakshPramaan:- (Knowledge by seeing)-
To know by looking from eyes. Suppose one man is coming from a far distance and one has doubt whether he is Ram or Shyam. When the person comes nearby then by seeing him, it is observed truly that he is Ram and not Shyam.

2.) ANUMAAN:- (By Guess)-
By seeing some signs of a matter, the perfect knowledge of the matter is gained. Suppose there is a smoke in the sky at a far distance then it is guessed that there will be fire for sure. By seeing a child, it is guessed that he has parents. By seeing the universe, it is guessed that somebody has created it, etc.

3.) Upmaan:-
When one sees some qualities in a matter and elsewhere he sees the same qualities in

other matter similar to the previous one, then the latter is known equivalent to the former, i.e., by seeing similar qualities in other, knowledge of the latter is gained. For example, the new clerk Ram avtar is same as was the previous one. You go and Ram avtar will do the work without taking bribe.

4.) ShabdPramaan:-
Vedas are proof and the learned, experienced philosopher, when he speaks, his words are proofs.

5.) Aitehyam:-
i.e. the history written by the true, learned people is considered as true proof.

6.) Arthapatti:-
A talk delivered by someone is understood by others with its reverse knowledge too. For example, one says that Hunger is overcome by taking food. On this, other man has understood that without food, hunger cannot be overcome.

7.) Sambhav (Possibility):-
For example, one says that sun is a cause of rain or parents are the cause of children and others believe but one says that Kumbhkaran used to sleep for six months and he had five miles long moustache and twenty miles long nose, as written in TulsikritRamayan, then a learned will not believe.

8.) Abhaav (Deficiency):-
If one thing is not available somewhere as there is deficiency of the same at that place then the same thing can be available at other place. For example- one says to other that bring the sugarcane from Ram's house. Sugarcane was finished there and the person bought sugarcane from the market.

New Vedantism - The meaning of the word "Vedant" in Hindi is Ved+Ant, i.e., Ved means ved and ant means last i.e. the last chapter of Vedas having conclusion of all previous chapters whereas new Vedanta (self-made) says its meaning that soul is God and there is nothing except God i.e., there is neither mother, father or creation or matters etc. and all these are seen duly indulged in illusion.

So, new vedantism says that soul and universe is not there, giving example of misunderstanding of snake in rope. So, here abhaav proof is utilized to negate the example of seeing snake in rope i.e. rope seems to be snake; the structure of rope being like snake because there is a deficiency of snake at the spot of rope but still snake is available at other places. So example is wrong.

There are eight proofs to come to the truth. By using ShabdaPramaan, neither Vedas/Six Shastras/Geeta/Upnishads or present learned experienced Rishis have told about chanting Gayatri for 108 or 1008 times etc. So, figures are unauthentic please.

All Vedas say about souls as alive matters and Prakriti made all articles of universe like Sun, Moon etc., as non-alive. Vedas say that all non-alive matters are in their own limit. For example- all planets/matters/articles are automatically meant for the services of souls, including destructive body of human-beings. So, non-alive matters are not worshippable but due to illusion people worship sun, moon, air, fire, statues etc. etc. Illusion is due to lack of study of Vedas.

तलाश एक सच्चे सखा की

अंजना दीवान
इन्डोनेशिया

''स नो बन्धुर्जनिता स विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा''
यत्र देवा अमृतमानशानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त
(यजुर्वेद मन्त्र 32/10)

वेद का यह स्तुति मन्त्र हमेशा यज्ञ में गुरु जी (स्वामी राम स्वरूप जी) के साथ और घर में भी हवन करते समय बोलते थे लेकिन कभी यह जानने की चेष्टा नहीं की, कि सब जगत् को उत्पन्न करने वाला, सब भुवनों–लोकों को जानने वाला, कर्म फल का विधान करने वाला ईश्वर हमारा बन्धु है, सखा है।

बचपन में तो हमें अपने माता–पिता से बढ़ कर कभी कोई सखा नहीं लगा। स्कूल–कालेज में जाने लगे तो किसी २–३ के साथ एक जैसे मन–विचार मिलने के कारण वो ही अपने सच्चे सखा लगते थे। शादी के बाद माता–पिता ने समझाया कि तुम्हारा हमसफ़र ही तुम्हारा सबसे अच्छा सखा है। जब ऊपर लिखे वेद–मन्त्र 'स नो बन्धुर्जनिता...' का ज्ञान बुद्धि में प्रवेश किया तो हमारी सोच ही बदल गई।

सन् २००४ की बात है कि हमारी कुछ सहेलियों ने हमें हवन के मन्त्र अपने बच्चों को सिखाने के लिये आग्रह किया। गुरु महाराज जी के आशीर्वाद से और ईश्वर कृपा से जल्द ही हमने यह कार्य शुरू कर दिया। गुरुजी पर और हवन पर हमें हमेशा से ही अटूट विश्वास था क्योंकि हमारी माताजी हर कार्य के लिए हवन में यही कहती थीं कि मेरे गुरु महाराज जी ने मेरा कम करी ओडना है (काम कर देना है) और सच में बड़ी सरलता से उनके सब कार्य हो भी जाते थे। जब मैंने भी बच्चों को सिखाना शुरू किया तो मन्त्रों का मनन करना भी शुरू किया। गुरुजी से अक्सर मन्त्रों का सही अर्थ–भावार्थ ई–मेल द्वारा

केवल वेद द्वारा ही पदार्थों का ज्ञान, कर्म और उपासना का ज्ञान होता है।

समझा जाता था। जब इन मन्त्रों के गूढ़ रहस्य को जाना तो सच में इन मन्त्रों से ऐसा प्यार हुआ कि यज्ञ और हवन ही मुझे अपने सब से प्रिय सखा लगने लगे।

गुरुजी की वाणी ***''यज्ञो वै श्रेष्ठतमम् कर्मः''*** अर्थात् यज्ञ ही विश्व का सर्वश्रेष्ठ कर्म है यह समझ आने लगी क्योंकि यज्ञ के हर एक मन्त्र में ईश्वर हर प्रकार से सुखों की वर्षा कर रहा है। न सिर्फ वायुमण्डल को शुद्ध कर रहा है बल्कि हमारे घर के अन्न–जल सब को शुद्ध कर रहा है। सब से अहम् बात कि हमारे मन–बुद्धि आदि सब को शुद्ध कर रहा है, हमारी इन्द्रियों को शुभ कार्य करने के लिए प्रेरित कर रहा है। हमें हिंसक और पाप कर्म करने से रोक रहा है। हमें मनुष्य से देव/देवी बना रहा है।

यज्ञ/हवन के पहले ही मन्त्र ***''ओ३म् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परा सुव... (यजु० मंत्र 30/3)''*** में हम ईश्वर से हमारी बुराइयों (काम, क्रोध, अहंकार, राग, द्वेष आदि) को दूर करने की और जो अच्छे गुण हैं उन्हें प्रदान करने के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। ***''ओ३म् अग्ने नय सुपथा रायेअस्मान् विश्वानि देव..... (यजु० मंत्र 40/16)'' में*** हम ईश्वर से प्रार्थना कर रहे हैं कि हमसे कुटिलता तथा पाप कर्म को दूर करें और हमें धन प्राप्ति के लिए, अच्छे मार्ग से, सब श्रेष्ठ ज्ञान प्राप्त कराइए। ***''ओ३म् इषे त्वोर्ज्जे त्वा वायव स्थ देवो.. .. (यजु० मंत्र 1/1)''*** इस मन्त्र में हम ईश्वर से प्रार्थना कर रहे हैं कि हम अन्न इत्यादि के लिए, शारीरिक तथा आत्मिक बल के लिए आप की शरण को प्राप्त हों। हे प्रभु! आप हमारी इन्द्रियों, अन्त: करण तथा प्राणों को यज्ञ रूपी श्रेष्ठ कर्म में लगाए रखें। हमारे समाज में क्षय जैसे रोग, संक्रामक रोग, पापी, चोर इत्यादि उत्पन्न न होवें, पाप की इच्छा करने वाले भी समाज में उत्पन्न न होवें और इस सम्पूर्ण पृथिवी पर अति अधिक अटल सुख हो और शुभ कर्म करने वाले यजमान के परिवार और पशुओं की रक्षा करो। ***सामवेद मंत्र 1458*** में हम ईश्वर से हमारी आज–आज और कल–कल तथा परसों और आने वाले सब दिनों में, यहाँ तक की दिन और रात में भी रक्षा करने के लिए प्रार्थना कर रहे हैं। इसी प्रकार हवन के अन्य मन्त्रों में भी ईश्वर से हम अपनी रक्षा के लिए, निरोगता के लिए अपनी तथा अपने परिवार की और समाज की उन्नति के लिए, मन की बुराइयों को तथा सामाजिक

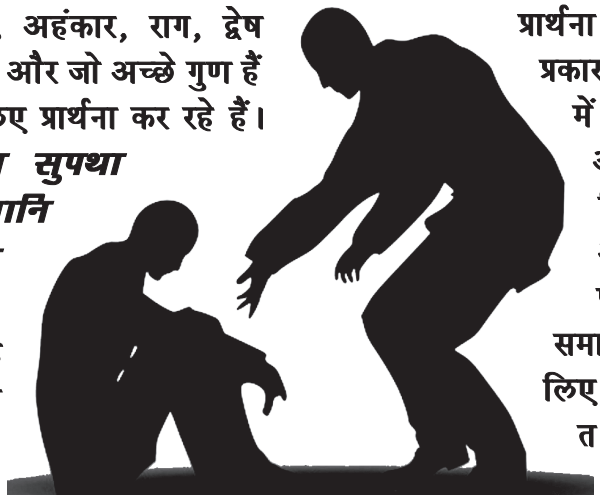

कुरीतियों को दूर करने के लिए, शुद्ध वातावरण, अन्न–जल, यहाँ तक की शुद्ध राजनीति के लिए भी, हर प्रकार से सुखमय जीवन के लिए प्रार्थना कर रहे हैं।

ऐसे सखा से कौन नहीं प्यार करना चाहेगा, जो हर प्रकार से हमारे जीवन में सुखों की वर्षा कर रहा हो, लेकिन विद्वानों के बिना ऐसे सखा को कोई नहीं जान सकता। वेद के विद्वान् ही हमें यज्ञ की प्रेरणा देते हैं और यज्ञ में ही हम ईश्वर की महिमा और उसके गुणों को जान सकते हैं।

गुरुजी अक्सर कहते हैं कि अगर हम किसी भी मनुष्य को उसके नाम से पुकारेंगे तो वह झट से कहेगा, हाँ, जी! आप ने मुझे बुलाया। उसी प्रकार जब हम यज्ञ/हवन में वेद मन्त्रों से ईश्वर से प्रार्थना करेंगे तो वह ईश्वर भी हमारी पुकार ज़रूर सुनेगा और हर क्षण हमारी रक्षा करेगा। क्यों न हम उस ईश्वर को ही अपना सखा बनाएँ और उसकी दी हुई वाणी (वेद–वाणी) को ही अपनाएँ, जो चेतन ब्रह्म है।

यज्ञ/हवन से जुड़ने के लिए सारा श्रेय हम अपने गुरु ***''स्वामी राम स्वरूप जी''*** को देते हैं। ***''दोषावस्तः दिवे–दिवे'',*** नित्य सुबह–शाम गुरु कृपा से जब भी हवन करती हूँ ऐसे लगता है मानो पूरा दिन कार्य करने के लिए ऊर्जा मिल गई है और मेरे देव/सखा ने मेरे मन की सारी बातें पढ़ ली हैं। हर कार्य में आगे बढ़ने के लिए प्रेरणा दे रहे हैं और हर कार्य अंग–संग विराजमान होकर कर रहे हैं। हे ईश्वर! विद्वानों का संग कभी भी हमारे से ना छूटे, यही हमारे सच्चे सखा हैं और हमेशा इनकी नाव में बैठकर यज्ञ/हवन से जुड़े रहें। (नोटः– लेख में जो भी वेद मन्त्रों का उल्लेख है वो हम नें अपने गुरु ''स्वामी राम स्वरूप जी'' से ही सीखे हैं।)

संपादक के विचार

अंजना बेटी ने अपने वैदिक विचार प्रस्तुत करने के लिए जो विषय ''सखा'' चुना है, वह सर्वोत्तम है। ***चारों वेदों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि मनुष्य के दो ही सर्वोत्तम सखा हैं– एक वेद का ज्ञाता विद्वान् और दूसरा तीनों लोकों को रचने वाला, सर्वशक्तिमान् परमेश्वर।*** ईश्वर कृपा से वेद के विद्वान् आचार्य का संरक्षण प्राप्त होता है और आचार्य की कृपा से वेद और वेद में वर्णित सभी पदार्थों सहित परमेश्वर का

ज्ञान प्राप्त करके, दु:खों का नाश करके, मनुष्य मोक्ष प्राप्त करता है। वेद कहता है– वस्तुत: वही पुरुष भाग्यशाली है जो कृतज्ञ तथा यथार्थ वक्ता, मनुष्यों के लिए बुद्धि देने और अविद्या आदि कलेशों का नाश करने वाले, विद्वान् की सेवा करके विद्या प्राप्त करता है।

ऋग्वेद मन्त्र 5/44/14 में कहा– ***''यः जागार....''*** अर्थात् जो अविद्या रूप निद्रा से उठकर जागने वाला है, ऋग्वेद के मन्त्र तथा अन्य जन उसकी कामना करते हैं, सामवेद के मन्त्र उसकी कामना करते हैं, ईश्वर उसका सखा बनता है।

भाव यही है कि जो मनुष्य आलस्य आदि का त्याग करके, पुरुषार्थी, धार्मिक और जितेन्द्रिय होते हैं, उन्हीं को यह विद्या और उत्तम शिक्षा प्राप्त होती है।

कठोपनिषद् का ऋषि भी इस विषय में कहता है कि ***हे जिज्ञासुओं! उठो, जागो, ईश्वर से वरदान पाए हुए विद्वानों की शरण में पहुँचकर ब्रह्म विद्या को जानो।*** स्पष्ट है कि मनुष्य जन्म का उद्देश्य वेद ज्ञाता विद्वानों की शरण में जाकर, सेवा भक्ति द्वारा वैदिक ज्ञान प्राप्त करके मोक्ष पाना है। अत: सब मनुष्यों को आलस्य आदि का त्याग करके, पुरुषार्थी होकर, विद्वानों से वेद विद्या प्राप्त करनी चाहिए। यह हमारे सच्चे सखा हैं।

माता–पिता पालन–पोषण एवं प्रथम गुरु के रूप में हमें प्राप्त होते हैं। अत: उनकी तन, मन, धन, आदि से प्रसन्नतापूर्वक सेवा करके ऋण चुकाने का उपदेश वेदों में स्पष्ट रूप से कहा गया है। माता–पिता हमारे जन्म–मरण के साथी हैं परन्तु वैदिक विद्वान् जन्म–मरण सहित मृत्यु के पश्चात् भी आगे के पाँच जन्मों तक साथ देकर जिज्ञासु को मोक्ष प्राप्त कराने में सहायक हैं। ***अतः विद्वान् ही हमारा सच्चा सखा है, इसके पश्चात् ईश्वर हमारा सच्चा सखा है जिसने हमें कर्मानुसार जन्म देकर इस संसार के सब सुख दिए।*** जब हम गुरु द्वारा उपदेश किए वेद मार्ग पर चलकर उसकी स्तुति, उपासना और प्रार्थना करते हैं तो वह शीघ्र ही प्रसन्न होकर, दया करके, कृपा बरसाकर हमारा कल्याण करता है। इसी कटु सत्य पर अन्जना बेटी ने पाठकों का ध्यान खींचा है। VIV

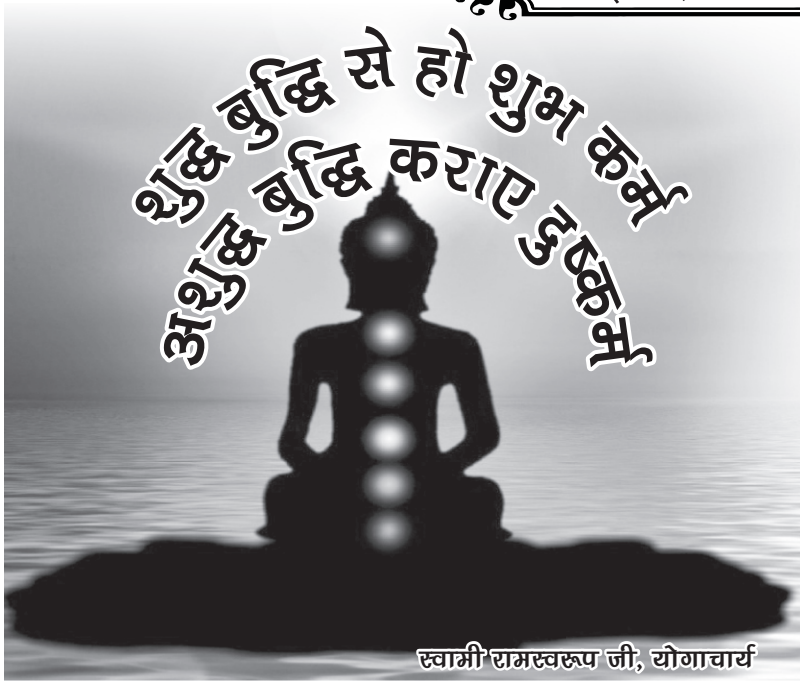

स्वामी रामस्वरूप जी, योगाचार्य

ज्ञान के बिना कर्म व्यर्थ हैं। विश्व में आज ज्ञान शब्द का अर्थ आधारहीन सा हो जाता है। अनादिकाल से वैदिक परंपरा में विद् धातु से ज्ञान शब्द निष्पन्न होता है, जिसका अर्थ है वेद। अत: ईश्वर से उत्पन्न चारों वेद अनन्त ज्ञान का भण्डार हैं। विश्व की किसी भी संस्कृति में, जहाँ–जहाँ सत्य ज्ञान है, वह वेदों से ही लिया गया है क्योंकि ज्ञान दिए बिना ज्ञान नहीं होता और प्रत्येक सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर वेद द्वारा मनुष्य जाति को ज्ञान देता आया है ***(देखें यजुर्वेद मन्त्र 40/8)।*** इसी आधार पर ***यजुर्वेद मन्त्र 4/23*** में उपदेश है कि अज्ञान नाशक ***''देव्या धिया''*** अर्थात् ज्ञान से प्रकाशित बुद्धि तथा कर्म द्वारा, पुरुषार्थ से दिव्य वेदवाणी को प्राप्त करके जीवन का अध्ययन करें, आयु को बढ़ाएँ और वेदवाणी का प्रचार करें। जैसा कि पिछले युगों में ऋषि, मुनियों, राज ऋषियों, श्री राम, श्री कृष्ण एवं जनता ने किया और पृथिवी पर स्थिर सुख–शांति और भाईचारा बनाए रखा। ऐसी सुखवर्धक वैदिक परम्परा को तोड़ कर ही आज हम दु:खी हैं। इसी सुखदायी परंपरा का वर्णन ईश्वर ने इसी प्रकार ***यजुर्वेद मन्त्र 19/39*** में किया है कि सभी जिज्ञासु वेद के ज्ञाता, विद्वानों से प्रार्थना करें कि ***(देवजना:)*** हे विद्वान्। ***(मा पुनन्तु धिय: पुनन्तु)*** आप अपनी विद्या द्वारा मुझे और मेरी बुद्धि को पवित्र करें अर्थात् मुझ पर जो रज, तम, सत्व गुण और इनसे उत्पन्न काम–क्रोध, अविद्या आदि बुराइयों का पर्दा चढ़ा हुआ है, उसे हटा दें। माता–पिता भी अपने पवित्र आचरण तथा कर्मों द्वारा पुत्रों–पुत्रियों आदि को ब्रह्मचर्य और सुशिक्षा द्वारा गुणवान् बनाएँ।

मनुष्य बुद्धि के आधार पर ही निर्णय लेता है। यहाँ हमें यह समझना है कि मनुष्य कहने से तात्पर्य जीवात्मा है। ***मनु स्मृति श्लोक 6/109*** का उपदेश है–

''ज्ञानेन बुद्धि शुद्धयति''

अर्थात् वैदिक ज्ञान प्राप्त करने से बुद्धि शुद्ध होती है इसलिए हम ज्ञान सुनें। वैदिक ज्ञान के अभाव में ही पृथिवी पर अशुद्ध बुद्धि से दुष्कर्म हो रहे हैं।

श्रोत्रीय (वेद का विद्वान्) की अतिथि संज्ञा है– अथर्ववेद

इस विषय में ***ऋग्वेद मन्त्र 4/24/4*** का भाव है कि योगाभ्यास के अभाव में बुद्धि नहीं बढ़ती और बुद्धि के बिना धन और आत्मा की सिद्धि नहीं होती। फलस्वरूप भ्रष्ट बुद्धि से भ्रष्ट कर्म करके जीव जीवन नष्ट कर लेता है। कठोपनिषद् कहता है कि जो सदा अपवित्र विचारों को ही सोचता है, वह सदा संसार में भटकता फिरता है तथा जन्म–मरण के चक्कर में फंसा रहता है।

अथर्ववेद मन्त्र 9/9/2 तथा कठोपनिषद् का उपदेश है कि इस शरीर रूपी रथ में दो कान, दो नासिका छिद्र, दो आँखें और जिह्वा, ये सात दीपक जुड़े हैं। उपनिषद् कहता है जीवात्मा रथ का स्वामी है, बुद्धि सारथी है, इन्द्रियाँ घोड़े हैं और मन लगाम है। जब जीवात्मा, इन्द्रियाँ तथा मन मिलकर कोई कर्म करते हैं तब मनुष्य–जीवात्मा भोक्ता कहलाता है। जो वेद का ज्ञाता, ज्ञानी है और जो जीवात्मा मन के साथ नहीं परन्तु मन जीवात्मा के आधीन कर्म करता है तथा जो पवित्र वैदिक विचारों पर ही विचार करता है, वह मोक्ष पद प्राप्त करता है और ऐसी कल्याणकारी स्थिति बिना वेद मार्ग पर चले नहीं आती।

श्रीमद्भगवद्गीता श्लोक 3/42 भी विचारणीय है जिसमें कहा कि शरीर से इन्द्रियाँ परे अर्थात् बलवान्, इन्द्रियों से परे मन है, मन से परे बुद्धि और बुद्धि से भी जो परे अर्थात् बलवान् है, वह चेतन जीवात्मा है। ईश्वर ऋग्वेद में प्रेरणा देता है कि मनुष्य ***''मेधाम् अयासिषम्'' (मन्त्र 9/96/7)*** अर्थात् ऐसी बुद्धि को प्राप्त करे जो वैदिक शुभ कर्म कराकर अर्थ, धर्म, काम और मोक्ष की सिद्धि कर दे। ***सामवेद मन्त्र 945*** कहता है कि यज्ञ करने वाले मनुष्य की बुद्धि शुद्ध होती है। ***कठोपनिषद् श्लोक 1/3/9*** में उपदेश है कि जिसकी बुद्धि यज्ञ, योगाभ्यास आदि साधना द्वारा शुद्ध एवं विशेष ज्ञान वाली है, वही जीव परम धाम अर्थात् परमात्मा को प्राप्त करता है, जो बुद्धि से भी परे है। इसी लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए ही तो ईश्वर ने हमें मनुष्य का शरीर दिया है।

सारांश यही है कि जब तक नर–नारी आदि वैदिक मार्ग को नहीं अपनाते, वेद के ज्ञाता, विद्वान् आचार्य के आश्रय में रहकर वेदों का सुनना तदानुसार अष्टाँग योग की

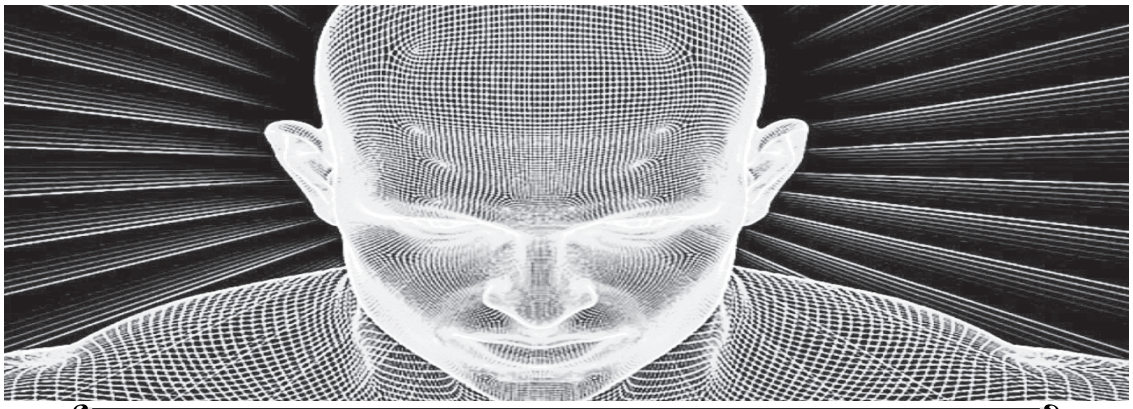

संयमी मनुष्य गुरु सेवा द्वारा कभी नरक को प्राप्त नहीं होता – महाभारत अनु. पर्व

साधना, यज्ञ–अग्निहोत्र एवं ईश्वर के नाम से स्मरण आदि नित्य नहीं करते, उनकी बुद्धि कभी भी शुद्ध नहीं हो सकती एवं अशुद्ध बुद्धि से सांसारिक दुष्कर्म, काम–क्रोध आदि विषय–विकार में लिप्तता एवं अविद्याग्रस्त हुआ जीवात्मा, जैसा ऊपर कहा, जन्म–मरण के चक्कर में फंसा सदा दु:खी रहता है।

विचारणीय विषय यह भी है कि आज के मनुष्य केवल भौतिकवाद की ओर आकर्षित होकर धन–सम्पदा और विषय–विकारों में लिप्त होने को ही सुख मान बैठे हैं तब वह सुख की इच्छा कैसे कर सकते हैं अर्थात् कभी नहीं कर सकते क्योंकि आज के मनुष्य प्राय: तथा–कथित साधु–सन्तों के दुष्प्रचार के कारण एवं विषय–विकारों के आनन्द में डूबे होने के कारण वेद सुनना पसन्द नहीं करते। फिर मनुष्य को सद्बुद्धि कहाँ से आएगी, क्यों फिर वह परोपकार करेगा और वह क्यों फिर यज्ञ करेगा? परोपकार और यज्ञ किए बिना तो वह सदा दु:खी ही तो रहेगा।

वेद में राजा का भी कर्तव्य यह बताया है कि वह और उसके मन्त्री सभी स्वयं भी वेद के ज्ञाता हों और प्रजा का कोई भी बेटा–बेटी वेद की विद्या से अनभिज्ञ ना हो। पिछले युगों के सभी असंख्य राजा जैसे दशरथ, हरिश्चंद्र, मनु, ययाति आदि गुरुकुल की व्यवस्था करते थे और प्रजा का प्रत्येक बालिका–बालक छह–आठ वर्ष की आयु तक गुरुकुल में जाकर वेदों का अध्ययन करते थे, यह सबके लिए अनिवार्य था। फलस्वरूप उस समय कोई मूर्ख, चोर, डाकू, लुटेरे, झूठ बोलने वाले, विषय–विकारी, लम्पट, दुष्ट अर्थात् किसी भी प्रकार का पाप कर्म करने वाले नहीं होते थे और प्रजा सुखी थी।

आज हमें पुन: वेदों की ओर लौटना होगा जिससे हमारा भारतवर्ष पुन: विश्व गुरु का पद प्राप्त कर सके। इसके लिए सभी देश भर की जनता को वेद ज्ञान प्राप्त करने और इस ज्ञान को घर–घर पहुँचाने में सहयोग देना होगा। इससे ही हमारा देश पुरातन काल की तरह सुदृढ़ बनेगा। देश की सुदृढ़ता के लिए देश की संस्कृति का घर–घर पहुँचना आवश्यक होता है और देश को बर्बाद करने के लिए देश की संस्कृति को नष्ट करना होता है। आज हमारे ऋषि–मुनियों, योगियों, तपस्वियों की भूमि, भारतभूमि से विशेष षड़यन्त्र को रचकर देश की सनातन, अविनाशी, परम सुख दायक वैदिक संस्कृति के सूर्य को अस्त प्राय: कर दिया है जिससे देश में अविद्या रूपी अन्धकार फैल गया है और बुद्धि भ्रष्ट प्राय: है। ऊपर कहे ***मनु स्मृति श्लोक 6/109*** के अनुसार ज्ञान विहीन होने के कारण देश में शुद्ध बुद्धियों का अभाव है। फलस्वरूप हमारा राष्ट्र सुदृढ़ अवस्था में नहीं है। VIV

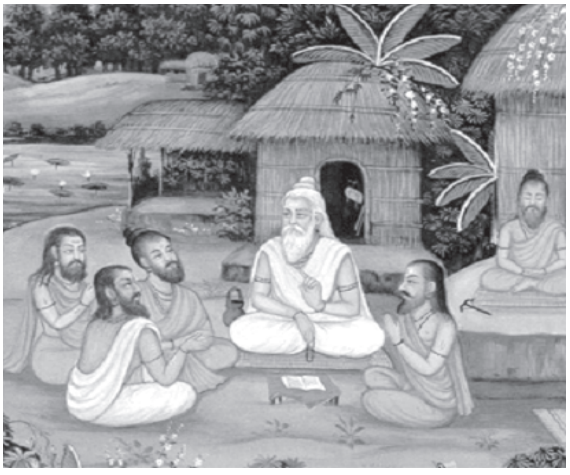

त्याग का संपादन अति श्रेष्ठ तप है– महाभारत अनु० पर्व

Difference between Alive & Non-Alive matters

Swami Ram Swarup 'Yogacharya'

"Anyadevaahurvidyaya
Anyadaahuravidyayaha,

Iti Shushrum Dheerannaam
Ye Nastadvichachakshirey."

(Yajurved Mantra 40/13)

It is sad that in the absence of the listening of eternal knowledge of vedas, which emanates directly from God in the beginning of each creation, nowadays people are mostly ignorant to make difference between alive and non-alive matters.

As a result, worship of non-alive matters has come into existence. Following is the ***Yajurved mantra 40/13*** which clarifies the difference between alive and non-alive matters.

Word-meaning :

Oh! Man, the learned of vedas ***(Vichachakshrey)*** have told ***(Naha)*** us that ***(Vidyayaha)*** knowledge, which has already been explained in previous mantra 40/12, has ***(Anyat)*** its another meaning/result, ***(Aahuhu)*** it is said.

AND

As about ***(Avidyayaha)*** illusion/ignorance,description of which has also been given in previous mantra 40/12 ***(Anyat)*** its meaning/ result is also another one ***(Tat Shushrum)*** we have listened the said preach from ***(Dheerannaam)*** the learned, who have realized themselves as well as God.

{But it is sad that nowadays mostly people do not listen to vedas/traditional preach from the said learned of vedas and hence the problem.}

Meaning:

Oh! Man, the learned have told us that knowledge, which has already been explained in previous mantra 40/12, has its another meaning/result, it is said.

AND

As about illusion/ignorance, description of which has also been

यजुर्वेद मन्त्र 40/13

''अन्यदेवाहुर्विद्याया ऽ अन्यदाहुरविद्यायाः।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।''

given in previous mantra 40/12 its meaning/result is also another one we have listened the said preach from the learned, who have realized themselves as well as God.

Idea:

In the previous mantra 40/12, the form of avidya has been very well explained. The meaning of Avidya is to consider:- (i.) ***Anitya*** i.e. impermanent as Nitya i.e. eternal; (ii.) ***Apavitra*** i.e. impure as Pavitra i.e. Pure. (iii.) ***Dukh*** i.e. sorrows as Sukh i.e. Pleasure. (iv.) ***Anatma*** i.e. non-alive matter as Atma i.e. alive soul.

Therefore, those who worship impermanent, impure, non-alive matters and deal sorrows as pleasure, they enter the deepest ignorance which covers the vision of true knowledge.

Secondly, it has been preached that all the alive matters (souls) who are full of knowledge, they are called knower/learned. Similarly [Avidya] i.e., all the forms of illusion is required to be known.

{Alive matters [souls] attain the knowledge of non-alive matters.}

Therefore the idea of the mantra is this that the people should only worship and serve alive Almighty God or learned souls and all the matters which are different from the said alive matters, those are not to be worshipped. Otherwise they will have to experience sorrows.

We must learn here that there is a lot of difference between alive and non-alive matters. People who are indulged in illusion consider non-alive matters as alive matters and alive matters as non-alive matters and this illusion has come into existence after Mahabharat war i.e. about 5,300 years ago when the listening/study of the traditional knowledge of vedas had been stopped by the public.

You see, God is alive whereas prakriti is non-alive. So, all unlimited worldly matters like sun, moon, earth including the bodies of all living-beings are also non-alive matters, having being created from prakriti. Therefore any worldly matter if is worshipped, that will be the worship of non-alive matter which will be of no use for human-beings.

Therefore according to the said preach, everybody must listen to vedic knowledge from the learned who follow vedas and have realized themselves as well as God.

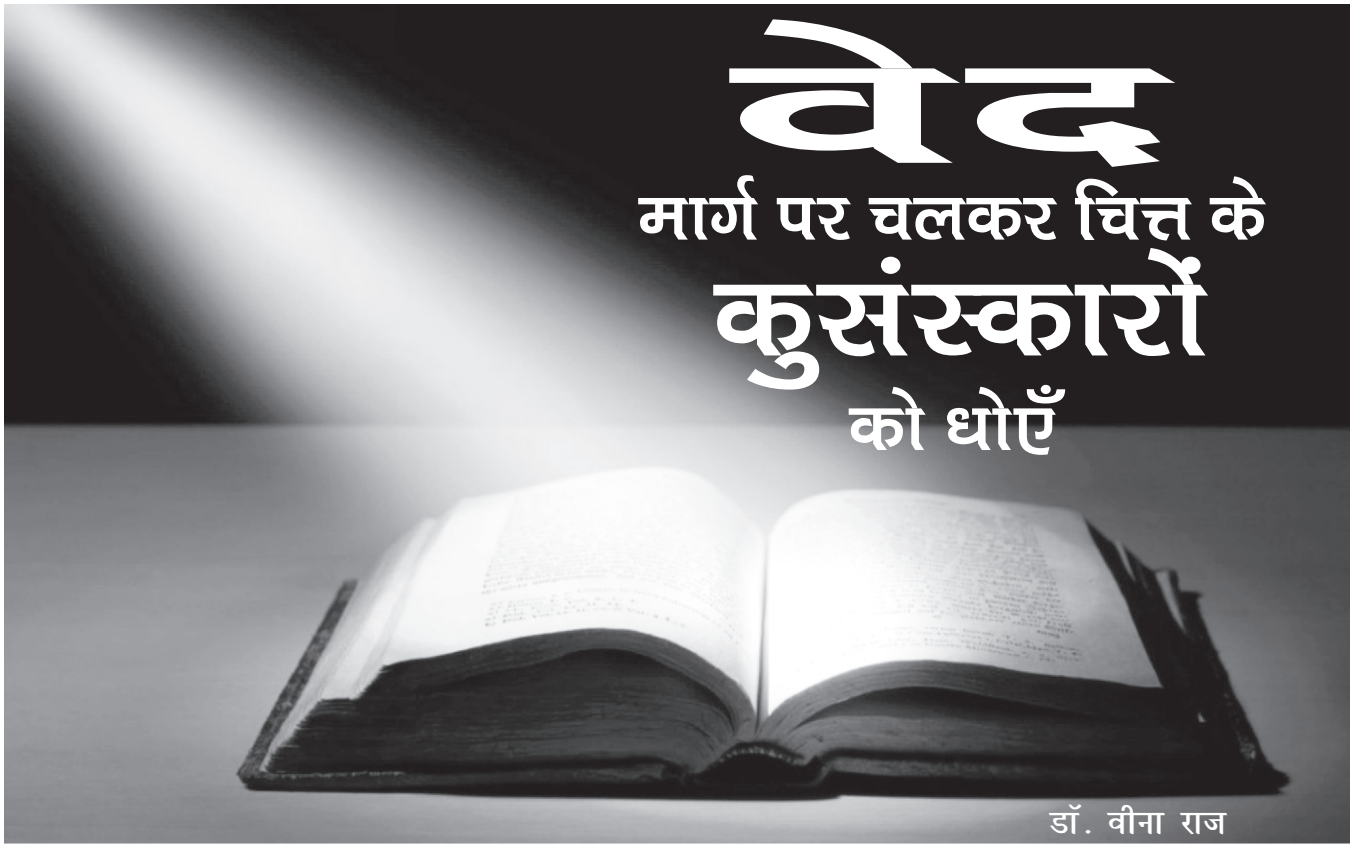

वेद मार्ग पर चलकर चित्त के कुसंस्कारों को धोएँ

डॉ. वीना राज

किसी भी विद्वान् आचार्य, ऋषि–मुनि अथवा योगी के विषय में लिखना पुनः उनकी योग वृत्ति को समझ पाना भी सरल नहीं। परन्तु ना जाने क्यों दिल ने नहीं अपितु कहीं चित्त पर पड़े परिवर्तित होते संस्कारों ने आत्मा से दस्तक दी कि जो मैंने अभी तक एक विद्वानाचार्य ***'स्वामी राम स्वरूप जी योगाचार्य'*** के विषय में जाना, समझा, शायद वह बहुत कम ही है क्योंकि वह भी एक योगी हैं। योगी को या तो ईश्वर जाने या वह स्वयं। परन्तु हो सकता है मैंने उन्हें रत्ती भर ही जाना हो जिसे कलमबद्ध किया जाए।

जीवन के इस पड़ाव पर पहुँचकर कहीं यह महसूस हुआ कि चित्त पर पड़े जन्मों के संस्कारों को स्वामी जी ने वेदों के ज्ञान की अमृत धारा से काफी हद तक संशोधित किया है। बचपन से शिव एवं हनुमान जी के मंदिर जाकर, पूरा शिवालय धोकर, फिर शिव और हनुमान जी की अराधना करना जीवन का एक अभिन्न अंग था। परन्तु स्वामी जी के सम्पर्क में आकर ज्ञात हुआ कि सृष्टि रचना और सृष्टि के प्रत्येक पदार्थ का पूरा ज्ञान वेदों में

है। जब मैंने गुरुजी के ज्ञान पर आचरण करना आरम्भ किया तो गुरुजी से सविनय निवेदन किया कि हे गुरुवर! आप का ज्ञान ठीक है परन्तु मैं हफ्ते में एक बार मन्दिर में ज़रूर जाँऊगी क्योंकि आप मेरे गुरु है और मैं आपसे झूठ नहीं बोल सकती और फिर जीवन यात्रा सुबह रोज़ हवन तथा हफ्ते में एक बार मंदिर जाने से आरम्भ हो गई। स्वामी जी को सदैव सत्य सुनाया और वह कभी किसी बात के लिए मना न करते, ज्ञान देकर उसका मूल रहस्य वेदों से समझा देते। बिल्ली के रास्ता काटने पर, दूध उबल जाना, काँच का टूटना, वीरवार कपड़े ना धोना या सिर ना धोना, बच्चों के टेवे बनाना, छींक आने पर रुक जाना, भूत–प्रेत पूजा आदि के ये संशय गुरुजी ने अपने वैदिक ज्ञान से समाप्त कर दिए, गुरुजी ने समझाया कि बेटा ***हर दिन, हर घड़ी, हर वेला शुभ है। इन्सान सुख–दुःख अपने पूर्व जन्मों के संस्कारों के अनुसार भोगता है।*** गुरुजी ने जब ज्योतिष विद्या के विषय में मन में पड़े अन्धविश्वासों को तोड़ा तो यह समझ आया कि सचमुच टेवों से हम किसी की उम्र कितनी है, मृत्यु का समय क्या है, नहीं जान सकते, टेवे मिलाने के पश्चात् हर दम्पति सुखी ही होगा, कोई तलाक न होगा, कोई नारी विधवा ना होगी, इसका पूर्व निर्णय नहीं दे सकते। परन्तु यदि बच्चों की बाल्यकाल से वैदिक विद्या आचरण में होगी तो हर घर में सुख–शांति होगी, वेद विद्या का आचरण करने वाले सब मनुष्य ईश्वर की उपासना सामवेद के अनुरूप करेंगे और सामवेद के अनुसार हर घर में ईश्वर की उपासना अग्निहोत्र/यज्ञ, वैदिक नाम स्मरण, योगाभ्यास एवं माता–पिता, गुरु, बुजुर्गों की सेवा आदि से होगी जिससे अच्छे भाग्य का निर्माण होगा। स्वामी जी प्रवचनों में कहते हैं कि बेटा यदि धन–दौलत की इच्छा से यहाँ आते हो तो यहाँ आने की ज़रूरत नहीं, घर बैठकर माता, पिता, अतिथि की सेवा दिल से करो, अग्निहोत्र नित्य करो, बहुत धन बरसेगा और यदि ब्रह्म की चाह हो तो इस वेद मन्दिर में आना चाहिए। ऐसे हैं स्वामी राम स्वरूप जी, योगाचार्य जिन्हें ना किसी से लेना ना देना, ना धन की चाह, मग्न रहना। बस अपनी योग समाधि में लीन रहते हैं, बात करने के लिए बस आँख खुलती है, फिर आँखें बन्द और प्रवचन करते समय तो उन्हें यदि चाय पानी देना हो तो शिष्यों को बहुत देर खड़े रहना पड़ता है कि कब कहीं

स्वामी रामस्वरूप, योगाचार्य
वेद प्रवचन करते हुए

ध्यान थोड़ा सा भी टूटे तो वह चाय–पानी दे दें। अब तो स्वास्थ्य थोड़ा ठीक ना रहने से गुरुजी चाय पानी लेते हैं अन्यथा बाल्यकाल से हम नें उन्हें देखा है– घंटों प्रवचन, समाधिस्थ होकर एक ही आसन सिद्धासन पर स्थिरता से बैठे रहना, शिष्य कभी–कभी थक जाते हैं, देखते हैं कि कब यह ध्यान टूटेगा और प्रवचन खत्म होगा। एक बार मेरे किसी परिचित ने मुझसे पूछा कि स्वामी जी का प्रवचन शुरू कब होगा और खत्म कितने बजे होगा। दो मिनट के लिए मन सोच में पड़ गया और फिर अनायास ही मुसकराहट सी होठों पर आ गई जब गुरुजी के भजन की ये पक्तियाँ याद आ गई–

''साडे सार ना कोई जाने हाँ,
असीं रमले मस्त दीवाने हाँ।''

मैंने उसे उत्तर दिया कि प्रवचन के शुरू का तो फिर पता हो सकता है परन्तु खत्म कम होगा, कुछ पता नहीं क्योंकि मेरे गुरुजी ईश्वर के दीवाने हैं। उनकी तार जब ईश्वर से जुड़ जाएगी तो ज्ञान की गंगा का प्रवाह कब कुछ क्षण के लिए रुकेगा, मैं कुछ नहीं कह सकती और मुझे उनकी सबसे प्यारी बात तो तब लगती है, जब वह कह उठते हैं– ''भई, हम तो ईश्वर के दीवाने हैं, उनकी मस्ती में हमें कुछ पता नहीं रहता, परन्तु आप तो संसारी प्राणी हैं। आपको तो भूख लगती है इसलिए ध्यान को तोड़ना पड़ता है।'' उनके ध्यान की तन्मयता पर तो मन और भी निहाल हो जाता है जब अक्सर वेद मन्त्रों की आहुति और प्रवचन के पश्चात् स्वामीजी को शिष्यों द्वारा याद करवाना पड़ता है कि आपने पूर्णाहुति नहीं डलवायी। क्या कहें और क्या–क्या लिखें स्वामी जी के विषय में। वह तो बिल्कुल भोले, ईश्वर के मस्त दीवाने हैं। मुझे तो यह महसूस होता है कि शायद शब्दकोश में मेरे पास ऐसे शब्द नहीं है जिन्हें जोड़कर मैं उनकी महानता बता सकूँ परन्तु हृदय की सरसता में उनकी महानता का आभास अव्यक्त रूप में सिर्फ मुझे ही नहीं, हर शिष्य को है।

मुझे याद आता है, वह समय जब बचपन में घर के मंदिर में बैठकर ज्योत जलाना और मंदिर जाकर दीया जलाते थे। अक्सर गुरुजी से इस विषय पर पूछते तो वह वैदिक ज्ञान से ओत–प्रोत करते हुए कह देते कि ईश्वर की ज्योति तो हमारे अन्दर है, वैदिक साधना द्वारा उस ज्योति का दर्शन करो। तुम्हारे द्वारा दिये से जलाई हुई ज्योति तो कुछ क्षण बाद स्वतः ही बुझ जाएगी। अक्सर इस ज्योति के विषय में परिचर्चा करते हुए, वह एक भजन गाते हैं–

''बिरहन मंदिर दिया ना बाल,
बिन बाती, बिन तेल जुगत सों,
बिन दीपक उजियार....।''

कि हे बिरहन! यह तेरा शरीर एक मंदिर है जिसके अन्दर तुझे ऐसी अखण्ड, कभी ना बुझने वाली ज्योति का दर्शन करना है जिसे न

तेल, न बत्ती, न दीपक की ही ज़रूरत है। तेरे अन्दर नाम स्मरण कर उजियाला हो जाएगा। स्वामी जी के वैदिक ज्ञान के अनुसार ईश्वर हमारे भीतर है, हम भीतर जाने का रास्ता खोजें, नाम स्मरण करें, ऐसा नाम जो श्री राम ने अपने गुरु वसिष्ठ जी से लिया, श्री कृष्ण जी ने संदीपन ऋषि जी से लिया और मीरा ने अपने गुरु जी से लिया। इसलिए नाम सदैव उस विद्वान् आचार्य से लें जो आपको अन्दर ही ईश्वर को खोजने का एवं पाने का रास्ता बता सकें, नाम की महिमा को ज्यादा यहाँ लेख में विस्तृत ना करते हुए इतना ही लिखूंगी कि आज नाम लेने की होड़ सी लग गई है, इसका यह तात्पर्य है कि आज की जनता यह तो भली–भांति जानती है कि नाम स्मरण से जीवन तर जाएगा, परन्तु गुरु कैसा हो, यह नहीं जानती, यदि मैं लेख में यह कह दूँ कि गुरु, स्वामी राम स्वरूप जी, योगाचार्य जैसा हो, तो मुझे उम्मीद है कि पाठक यह भी सोच सकते हैं कि शायद स्वामी जी की महिमा बढ़ाने के लिए यह लेख लिखा गया है। मेरा पाठकों से अनुरोध है कि नाम लेने से पहले और ढोंगी बाबाओं से ठगे जाने से बेहतर है कि वे एक बार सामवेद जरूर पढ़ लें जिसमें विस्तार से बताया गया है कि गुरु के क्या गुण हों। हाँ! यह लिखने में मुझे ज़रा भी हिचकिचाहट ना होगी कि सामवेद में वर्णित गुणों के अनुरूप स्वामी जी में वे सब गुण हैं। परन्तु स्वामी जी स्वयं की प्रशंसा तनिक भी पसंद नहीं करते। Wordsworth कहते हैं–

"Poetry is the spontaneous overflow of powerful feelings" और उसी **powerful feelings** के तहत कभी गुरुजी के विषय में संगत में माईक पे कुछ कहने की इच्छा भी हो तो गुरुजी सदैव टोक देते हैं या कह देते हैं बस दो मिनट ही कहना। इससे ज़्यादा नहीं और यदि गुरुजी से हम आग्रह कर भी दें कि दो मिनट और दे दें। ''आत्मा

अविद्या सभी अशुभ कर्मों का कारण है – यो० शा० 2/12

के भाव'' फट–फट कर आपकी महानता में कुछ कहना चाहते हैं, तो गुरुजी कहते हैं कि बेटा, गुरु की रज़ा में ही रज़ा समझनी चाहिए। ऐसा कहकर अक्सर चुप करवा देते हैं। मैंने चार साल पहले एक भजन गुरुजी की प्रशंसा में लिखा। स्वामी जी के आश्रम में एक कवि सम्मेलन हुआ, लेखिका होने के नाते मैंने भी उसमें हिस्सा लिया, परन्तु स्वामी जी ने सम्मेलन शुरू होने से पहले ही आदेश किया, मेरे विषय में तुम कुछ नहीं कहोगी, खासकर मेरी प्रशंसा में। जो भी कहना है–बोलना है, बस वेदों पर ही बोलोगे, उस भजन की कुछ पंक्तियाँ मैंने उन्हें कभी किसी दिवस पर ज़बरदस्ती ही सुनाई हैं। बाकि भजन के शब्द अभी दिल में ही हैं। जब गुरुजी की कृपा होगी तो शायद वह पूरा भजन सुन लेंगे, ईश्वर मेरी इस इच्छा को पूर्ण कर दें। ऐसे हैं स्वामी रामस्वरूप जी, जिन्हें जग उपकार, लोक उपकार के इलावा किसी चीज़ से लगाव नहीं। लेख की समाप्ति को ज़रा भी जी नहीं चाह रहा। हृदय के असंख्य भाव अभी भीतर हैं, जो फट–फट कर बाहर आना चाहते हैं परन्तु यह पत्रिका का लेख है, जहाँ और लोगों के लेखों को भी स्थान चाहिए। और भी लेखों द्वारा ''ज्ञान की अमृतधारा'' लोगों तक पहुँचनी चाहिए। इसलिए कलम को यहीं विराम देना होगा, ईश्वर की कृपा हुई और गुरुजी की अनुमति हुई तो हम अगली पत्रिका में इसी लेख को जारी करते हुए फिर मिलेंगे।

''हे गुरुवर! लोग शरीर को सँवारते हैं परन्तु आपने अपने वैदिक ज्ञान की अमृत धारा से अपने शिष्यों के चित्त पर पड़े पूर्व जन्मों के संस्कारों की मलिनता को धोया है और हमारी आत्मा के ऊपर पड़ा अज्ञान का पर्दा उठाया है, इसके लिए आपकी शिष्या/ बेटी सदैव ऋणी रहेगी, ऐसे ऋषियों के ज्ञान की अमृत धारा जब हर तरफ बहेगी, तभी वैदिक परम्परा वापिस आएगी और देश एवं विश्व का उत्थान होगा।''

गुरुजी की स्वयं रचित पंक्तियों के साथ लेख को यहीं समाप्त करती हूँ और फिर मिलेंगे अगले लेख में–

''आओ लौट चलें उस देश, जहाँ ऋषि वेद सुनाते हैं,
प्रभु प्रेरणा करें सुन मीत, तुझे तेरे वेद बुलाते हैं।''

VIV

Medical Science In Atharvaved

(1) Kand 3, Sukta 10 of Atharvaved inspires us to perform Yajyen daily which blesses us with long, happy life.

(2) Secondly, when we offer aahuti of ghee and samagri daily in the burning fire to perform Yajyen, this pious act gives us happy life and protects us from several unknown diseases including Tuberculosis.

(3) If a patient is suffering from acute gastric problems then to cure the disease, he should perform daily agnihotra under sunlight.

(4) If somebody is suffering from diseases and is even about to die then if he performs agnihotra by offering aahuti of ghee and samagri daily both times, then God ensures to bring the patient back from the lap of death and provides him with hundred years of age.

(5) Agnihotra increases eye-sight and stabilizes the power of other organs also.

पौर्णमासी और अमावस्या
की आगामी तिथियाँ
(अक्तूबर 2018 – मार्च 2019)

अक्तूबर 2018	नवम्बर 2018	दिसम्बर 2018
मंगलवार, 9 - अमावस्या बुधवार, 24 - पौर्णमासी	बुधवार, 7 - अमावस्या शुक्रवार, 23 - पौर्णमासी	शुक्रवार, 7 - अमावस्या शनिवार, 22 - पौर्णमासी
जनवरी 2019	**फरवरी 2019**	**मार्च 2019**
शनीवार, 5 - अमावस्या सोमवार, 21 - पौर्णमासी	सोमवार, 4 - अमावस्या मंगलवार, 19 - पौर्णमासी	बुधवार, 6 - अमावस्या बुधवार, 20 - पौर्णमासी

Soul does deeds by means of human body and God awards result- Yajurved Mantra 7/48.

गुरु-शिष्य संवाद

स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'

वर्षाकाल प्रारम्भ हो चुका है। अम्बर में घनघोर घटाँए, बादल की गर्जना एवं बिजली का चमकना आम सी बात हो गई है। प्यासी खेती को, पेड़—पौधों, जीव—जन्तुओं सबको भरपूर स्वच्छ जल प्राप्त हो रहा है। ऐसी सुन्दर, मनभावन वर्षा ऋतु में अभी—अभी प्रात:काल के यज्ञ की पूर्णाहुति पड़ी है और विद्यार्थीगण एक बड़े से, खुले से कक्ष में बैठकर आचार्य की प्रतीक्षा कर रहे हैं। फिर प्रतीक्षा समाप्त हुई और कक्ष में आचार्य ने प्रवेश किया। सभी विद्यार्थियों ने उठकर आचार्य का अभिनन्दन किया, नमस्ते की और आचार्य द्वारा स्थान ग्रहण करने के पश्चात् सभी विद्यार्थी भी अपने—अपने स्थान पर बैठ गए। उसी क्षण आचार्य ने विद्यार्थियों से प्रश्न किया, हे विद्यार्थियों! अभी—अभी आप प्रदीप्त अग्नि में यज्ञ की पूर्णाहुति डालकर आए हो। इस विषय में ऋचा बेटी से एक प्रश्न करता हूँ।

आचार्य : हे पुत्री, ऋचा! यज्ञ करने की आज्ञा किसने दी है?

ऋचा : हे आचार्य! वैसे तो चारों वेदों में ईश्वर ने यज्ञ को विश्व का सर्वश्रेष्ठ शुभ कर्म कहा है, फिर भी यजुर्वेद, जो हमें शुभ कर्म करने की प्रेरणा देता है, उसके पहले ही मन्त्र में ईश्वर ने सभी मनुष्यों को यह आज्ञा दी है कि सृष्टि रचयिता, सब सुखों एवं सब विद्याओं का दाता, परमेश्वर, वह हमारी इन्द्रियों, प्राण एवं अन्तःकरण को सबके उपकारक अत्यन्त श्रेष्ठ यज्ञ से जोड़ दे और इस प्रकार हम नित्य यज्ञ करें। यज्ञ अन्न–धन, दीर्घायु एवं सभी सुखों का देने वाला है।

हे आचार्य! ***यजुर्वेद मन्त्र 1/2*** में ईश्वर ने हमको समझाया है कि यज्ञ विश्व में पवित्रता फैलाता है। यदि आज हमारा देश यज्ञ करे तो प्रदूषण का नाश हो जाए। इस मन्त्र में यह भी कहा कि हे मनुष्य! तू और तेरा विद्वान्, दोनों इस यज्ञ का त्याग कभी मत करना। परन्तु वेद ना सुनने के कारण आज मनुष्य को यज्ञ के अनन्त लाभों का ज्ञान प्राप्त नहीं है। इसलिए अविद्याग्रस्त होकर हम मनुष्य यज्ञ नहीं करते फलस्वरूप पृथिवी पर प्रदूषण फैलाकर पृथिवी का नाश और मानवता को दुःख पहुँचाए जा रहे हैं। भिन्न–भिन्न प्रकार की बीमारियाँ, कीटाणुयुक्त भोजन और भाईचारे आदि में आई कमी का कारण वेद ना सुनना और यज्ञ ना करना ही तो है।

आचार्य: बहुत अच्छा, बेटी ऋचा। सुखी रहो। हे सोमेन्द्र! आप भी यज्ञ के विषय में कुछ बताँए।

सोमेन्द्र : हे आचार्य! ***यजुर्वेद मन्त्र 2/8, 9*** में ईश्वर का उपदेश है कि यज्ञ से अन्न और जल शुद्ध होते हैं तथा अधिक मात्रा में उत्पन्न होते हैं। ईश्वर कहता है कि मेरी (ईश्वर की) इस आज्ञा का कभी उल्लंघन न करें। अतः अत्यन्त सुखों को प्राप्त कराने वाले यज्ञ को नित्य करें। अग्नि में होम किए हुए घृत आदि पदार्थ आकाश में मेघमण्डल में स्थित होते हैं जिसे सूर्य वायु के सहयोग से धारण करता है और उन्हें वर्षा के रूप में भूमि पर बरसाता है जिससे भूमि में महान्

जीव कर्म करता है और ईश्वर उसका फल देता है – यजुर्वेद 7/48

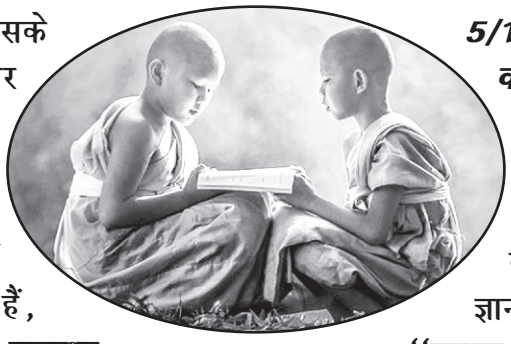

शक्ति उत्पन्न होती है जिसके फलस्वरूप पृथिवी पर दिव्य गुणों से युक्त औषधि और वनस्पति उत्पन्न होती हैं। यज्ञ के बिना जो भी हमारी फसलें और वनस्पति आदि होती हैं, वे शुद्ध नहीं होतीं। वह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होती हैं। इस कटु सत्य का वर्णन ***श्रीमद् भगवद्गीता श्लोक 3/14*** में भी किया गया है।

आचार्य : शाबाश, बेटा सोमेन्द्र! बहुत अच्छा, जीते रहो। पुत्र ओमेन्द्र! आप भी यज्ञ के विषय में अपने विचार प्रकट करें।

ओमेन्द्र : हे आचार्य! यज्ञ के द्वारा ईश्वर हमें स्वच्छ मन, विद्या, सोना—चाँदी, धन आदि प्रदान करता है। यज्ञ से परोपकारी, धार्मिक जनों की कामनाँए सिद्ध होती हैं। यज्ञ से ईश्वर सब अभीष्ट सुख प्रदान करता है। यह भाव ***यजुर्वेद मन्त्र 2/10*** के हैं। वेद और विद्वान् कहते हैं कि यज्ञ का प्रकाश ईश्वर ने किया है। यज्ञ करने वाले को ही बृहस्पति और ब्रह्मा का पद प्राप्त होता है। ***मन्त्र 2/13*** का भाव है कि हे परमेश्वर! मेरा मन नित्य शुभ कर्म करने और यज्ञ करने को प्राप्त हो।

आचार्य : अति उत्तम, पुत्र ओमेन्द्र! सुखी रहो। हे पुत्री, ऋचा! वेद ज्ञान की प्राप्ति का जीवन में क्या प्रभाव पड़ता है?

ऋचा : हे आचार्य! ***अथर्ववेद मन्त्र 5/11/2, 3*** का भाव है ***''न कामेन मघः''*** अर्थात् केवल कामना करने से मनुष्य ऐश्वर्य वाला नहीं बनता। उसे सब सुखों की वर्षा करने वाले वेद ज्ञान को प्राप्त करना चाहिए। ''सत्यम् काव्येन गभीरः'' वेद ज्ञान मनुष्य को गंभीर और ज्ञानी बनाता है।

आचार्य : शाबाश, बेटी ऋचा! हे ओमेन्द्र! क्या आप भी इस विषय में अपने विचार प्रस्तुत कर सकते हैं?

ओमेन्द्र : अवश्य आचार्य। ***सामवेद मन्त्र 959*** में कहा— हे (सोम) परमात्मा, आप (समुद्रः) (इव) समुन्दर के समान गम्भीर हैं और अगले मन्त्र में कहा कि आप वैदिक शब्दों को उत्पन्न करते हुए (वाचम् इष्यसि) वेद वाणी को हमारे हृदय में प्रेरित करते हो और इसी प्रकार वाल्मीकि रामायण, बालकाण्ड, प्रथम सर्ग में श्री राम को ***''समुद्र इव गाम्भीर्ये''*** अर्थात् श्री राम गम्भीरता में समुन्दर के समान थे, ऐसा कहा है।

सामवेद मन्त्र 721 भी इसी विषय में यही उपदेश करता है कि विद्वान् जन आलस्य, निद्रा, प्रमाद, आदि की इच्छा नहीं करते, वे गम्भीरता से ईश्वर की उपासना करते हैं।

तैत्तिरीयोपनिषद् में भी, हे आचार्य! ऋषि उपदेश करते हैं कि साधक सत्य बोले, धर्म का आचरण करे, ***''स्वाध्यायात् मा***

प्रमदः'' स्वाध्याय में कभी प्रमाद ना करे, गम्भीर रहे।

आचार्य : बहुत अच्छा, बेटा। बेटी ऋचा, ज्ञानी किसको कहते हैं?

ऋचा : हे आचार्य! ***अथर्ववेद मन्त्र 5/11/4*** का भाव है कि हे परमेश्वर! ***''त्वत् अन्यः कवितरः न''*** अर्थात् आपसे भिन्न कोई अधिक ज्ञानी नहीं है। भाव यह है कि परमेश्वर विद्वानों का भी विद्वान् है। विद् धातु से वेद शब्द निष्पन्न होता है जिसका अर्थ है जानना–ज्ञान। क्योंकि ईश्वर में चारों वेदों का ज्ञान सदा रहता है; प्रलय में भी रहता है तो उससे बढ़कर ज्ञानी कोई नहीं। परमेश्वर तो सब लोगों को जानने वाले, सर्वज्ञ हैं। अतः ज्ञानी वही है जो प्रभु की उपासना एवं कठोर अध्ययन द्वारा वेद के ज्ञान को प्राप्त करता है और उसके अनुसार चलता हुआ सदा सुखी रहता है।

आचार्य : अति उत्तम, पुत्री! पुत्र सोमेन्द्र, आप बताएँ महर्षि सुतीक्ष्ण से विदा लेकर जब श्री राम आगे चले तब मार्ग में सीताजी ने अपने पति श्रीराम से कौन से वचन कहे थे और श्रीराम ने उनको क्या उत्तर दिया था?

सोमेन्द्र : हे आचार्य! सीता जी ने उस समय श्रीराम से यह कहा कि हे राम! विचार करने पर आपको ज्ञात होगा कि आप सिंह, व्याघ्र और राक्षसों आदि को मारने की प्रतिज्ञा करके अधर्म का संचय कर रहे हैं। अकारण प्राणियों की हिंसा करना पाप है, इत्यादि।

हे आचार्य! उत्तर में श्री राम ने सीता जी से कहा कि हे सीते! ऊँचे कुल में उत्पन्न होने की सूचक, जो हित की बातें कही हैं, वह तुम्हारे कहने योग्य ही हैं। परन्तु हे देवी! तपस्वियों ने मेरे पास आकर कहा था– हे राम! अपने भाई लक्ष्मण सहित आप हम लोगों की रक्षा कीजिए। मैंने उनकी रक्षा करने की प्रतिज्ञा की है। हे सीते! मैं अपने प्राण त्याग सकता हूँ, लक्ष्मण सहित तुम्हें त्याग सकता हूँ परन्तु अपनी प्रतिज्ञा को, विशेषकर उस प्रतिज्ञा को जो ब्राह्मणों के समक्ष की है– कभी नहीं तोड़ सकता।

श्रीराम का यह उत्तर ऋषियों की सर्वोत्तम सेवा, रक्षा एवं प्रेम प्रकट करता है।

आचार्य : हे विद्यार्थियों! आपने ईश्वर की अमर वाणी वेद का उत्तम प्रकार से अध्ययन किया हुआ है, इसकी मुझे अत्याधिक प्रसन्नता है। ***अध्ययन के पश्चात् वेदों में दिए उपदेशों को सदा आचरण में लाने का प्रयत्न करते रहना। ऐसा करने से तुम्हें जीवन में सदा सुख प्राप्त रहेगा।*** VIV

ENTITLEMENT FOR Donations

Swami Ram Swarup 'Yogacharya'

Very few know that vedas themselves are treasure of unlimited and perennial knowledge which is donated by Almighty God in the beginning of every creation for the benefit of human-beings, who, at that time are completely ignorant.

So, the learned of vedas are of the view that just as sun sets, the darkness covers the whole atmosphere. Similarly, the eternal and everlasting knowledge of Vedas is like a divine sunlight and since the time people have left the study of vedas, the dark clouds of illusion have covered/overspread the entire world.

As per the preach of God in vedas, authenticity of unlimited matters of the world like sun, moon, earth, air, water, spiritualism, politics, moral duties/responsibilities of all mankind. etc. i.e. right from the blade of grass to Almighty God, must tally with ved mantras, otherwise truth cannot be established ***(Yog Shastra Sutra 1/7 also refers).*** The said fundamental unchangeable vedic law is now not in vogue due to the lack of knowledge of vedas and as a result illusion has generated and mostly people have made their own paths of worship, without recognising their authenticity according to vedas. ***(Tulsikrit Ramayan Uttarkand, Doha 100 {kha}also refers).***

For example: - A person says that existence of ghosts is there in the world. Now, as stated above, its authenticity should tally with vedas i.e., there must be some ved mantra which confirms the existence of ghosts in the world. But, you see, there is no such matter in vedas. So, existence of ghosts is a man-made false tradition.

Now here, keeping in view the vedic authenticity, we consider/discuss only one subject matter of Donation –

as to who is entitled to get the same as per vedas.

Rigved Mandal 10, Sukta 107 inspires to donate only in Yajyen. Mantra 1 states that after sun rise, the Yajyen is preformed wherein donation is offered to the learned of vedas.

Mantra 3 educates us that performing Yajyen with ved mantras and doing other pious deeds like services towards acharya, parents and after listening to the preach of vedas, the donation must be offered to learned of vedas. Mantra further states that those who do not donate, they are sinners.

Mantra 4 states those who offer the aahuti in Yajyen and after participating in such a pious function of vedic pravachan of learned of vedas, they should provide pure food and donate wealth to the learned.

Mantra 6 states that when the Yajmaan gives dakshinna to the learned then he becomes able to know the name of God.

Mantra 7 states that horses, cows, gold, food grains and other valuable articles should be donated to the learned of vedas, because the said donation becomes shelter to save the donor from sins.

Rigved Mantra 10/117/6 inspires rich people to donate to a learned of vedas in Yajyen.

Yajurved mantras 7/45 and 46 state to donate gold etc. to learned of vedas.

Mantra 46 clearly preaches that donation should only be given to a learned of vedas, Rishi and munis who have realised God.

I also appeal to all the aspirants to study the above ved mantras in the matter of donation, to know facts and to become learned themselves.

Based on the vedic knowledge, ***Manu Bhagwan in his Manu Smriti has*** also expressed his valuable views regarding donation, as under:-

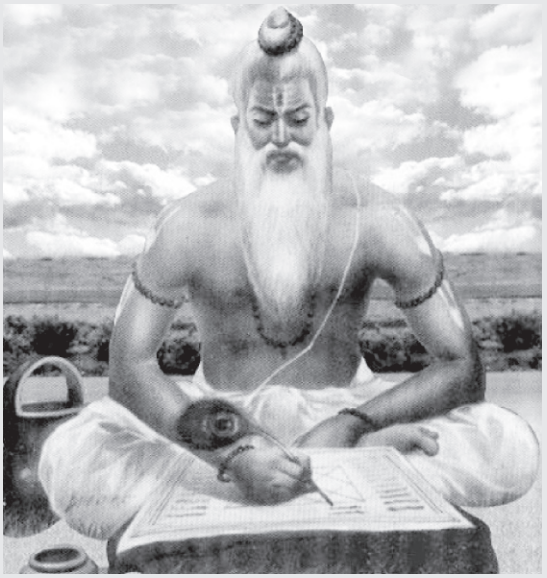

Those who donate to the persons
(a) who lack brahmacharya, true preach and austerity
(b) who are ignorant of vedas

(c) who take donation on the religious matters other than vedic fundamentals, they due to their corrupt deeds, immerse in the sea of sorrows. Further, such donation to the said three persons destroys the donors in present life and as regards donees, they are destroyed in future births. (So, keeping in view the preach of God in above ved mantras, should not public immediately stop donation to so-called undeserving saints to avoid spreading of illusion and sins?) Manu Smriti also preaches that just as person drowns with the boat made of stone in a river similarly, the ignorant donor and donees, both drown in the sea of sorrows. So, be alert about donation.

Conclusion of Vedas: - The entitled dignitaries get all kinds of pious donation like gold, silver, food grains, wealth etc. They are tapasvis, have full control over their senses, Rishi-munis, learned of vedas and who have realised God. Atharvaved states that such tapasvis make the nation strong.

Finding:- So, in the absence of vedic knowledge, people have started donating to the unauthorized so-called saints and such saints have spread blind faith like Present Astrology, Tantrikism, Teva, Vaastu Dosh, Kaal Sarp Yog, Mangalik, Pitri Dosh, Nav Grah Pooja , Ghost Worship, Worship against the vedas etc. (which do not exist in vedas and so are unauthentic), corruption, women dishonour, illusion etc. while dealing with the public. So, to make the nation strong we'll have to follow the vedic culture. Donation is a serious matter because duly indulged in blind faith, public has donated unlimited wealth to the undeserving so-called saints who are being caught by the police nowadays due to their immortal activities etc. The said activities are organised by spending huge amount of donation which they receive from their followers. That is why, Manu Bhagwan has stated above in his shloka that in such cases donor is destroyed in present life and donee in future births.

You see, thus the public has made so-called saints sound to save themselves from law and order for a long time, based on huge amount of donation and under the shelter of religion. Such so-called saints have weakened the public and nation by means of their sins and the illegal deeds which are not even permitted by God in vedas.

SO DESTROY ILLUSION BY FOLLOWING ETERNAL VEDIC PATH. VIV

बात जो दिल को छू गई

शीतल गुप्ता

गुरु जी कहते हैं जब तक कोई ज्ञान न दे तब तक ज्ञान होता नहीं है। जंगल में भील जाति के लोग अभी भी आदिवासी ही हैं क्योंकि अभी तक उन्हें कभी किसी ने ज्ञान नहीं दिया। हम अपने आप को बहुत सौभाग्य शाली समझते हैं जो कि हम एक तपस्वी, योगी, ऋषि ***स्वामी राम स्वरूप जी*** की शरण में हैं। जिस तरह पुरातन काल में श्री राम, श्री कृष्ण अपने गुरु वसिष्ठ जी, संदीपन जी के आश्रम में जाकर वेद विद्या सुनते थे। हमारे गुरु महाराज जी भी आज के इस दौर में वेद विद्या सुनाते हैं। हर वर्ष चारों वेदों के मन्त्रों का अनुष्ठान होता है। अनुष्ठान में चारों वेदों के मन्त्रों की आहुतियाँ डलवाते हैं और मन्त्रों के अर्थ समझाते हैं। आजकल इंटरनेट के कारण गुरु जी का ज्ञान घर बैठे भी सुन सकते हैं। गुरु जी अपने शिष्यों को हर एक चीज़ बहुत ही बारीकी से समझाते हैं और कहते हैं कापी, पेन लेकर लिखो, ताकि बार–बार अध्ययन से हम सुधर सकें। यह हम पर निर्भर है कि हम कितनी उनकी शिक्षा आचरण में लाते हैं और अपने आप को सुधारते हैं। गुरु जी की महानता, प्रेम, स्नेह, अपनेपन का ब्यान करना शब्दों की बात नहीं है। वो असीम है। गुरु जी जैसा कोई नहीं।

गुरु जी धरती पर ईश्वर की पहचान है, ईश्वर का वरदान हैं। गुरु जी का सारा ज्ञान वेदों पर आधारित होता है। वेद कोई पुस्तक नहीं है वह ईश्वरीय वाणी है जो ब्रह्म ऋषि के मुख से निकलती है।

गुरु जी ने यज्ञ–अनुष्ठान में हमें ***समय*** का बहुत अच्छा ज्ञान दिया जो दिल को छू गया। गुरु जी ने कहा समय एक घोड़ा है और उस घोड़े पर एक मटका रखा है जिस में हीरे–मोती, धन, दौलत, सुख–सम्पदा और भी बहुत कुछ अच्छा–अच्छा रखा है। गुरु जी ने कहा विद्वान् लोग इस घोड़े पर सवार हो जाते हैं और घड़े को पा लेते हैं अर्थात् जो लोग समय के अनुसार चलते हैं, आलस्य, निद्रा, चुगली में नहीं पड़े रहते और अपना जीवन समय के अनुसार व्यतीत करते हैं (जैसे कि उषा काल में उठकर साधना

करना, फिर यज्ञ–हवन करना, गृहस्थ के शुभ कार्य करना, नौकरी, दुकान जो भी है उसका कार्य अच्छे से करना, व्यर्थ गप्पों में, फिल्मों में, चुगली में, आलस्य में समय नहीं गंवाना। विद्यार्थी समय पर पुरुषार्थ करे। साँय काल को फिर हवन, नाम स्मरण, माता–पिता, गुरु की सेवा, किसी की मदद, मधुर–भाषी होकर, मन–बुद्धि गुरु को सौंप कर अपने सारे कर्तव्यों का पालन अच्छे से बिना क्रोध के करें) वो लोग उस घड़े को पा लेते हैं।

गुरुजी की बात सच दिल क्या आत्मा को छू गई और लगा हम ऐसे ही सुख को इधर–उधर ढूँढ रहे हैं, वह तो अपने आप में परिवर्तन लाकर, वैदिक विद्या को आचरण में लाकर समय रूपी घोड़े पर सवार होकर घड़े का पाना है और सबसे उत्तम जीवन में मोक्ष सुख को प्राप्त करने की कोशिश करनी है।

संपादक के विचार

काल (समय) का सबसे सूक्ष्म (छोटा) भाग ***''क्षण''*** कहलाता है। क्षण के और हिस्से नहीं किए जा सकते। क्षण काल का सबसे छोटा भाग है। क्षण के बाद दूसरा क्षण आता है और दोनों के बीच में कोई अन्तर नहीं होता।

व्यास मुनि का यह वचन बड़ा ही दिल को छू लेने वाला है कि दिन–रात्रि आदि मनुष्यों की बुद्धि द्वारा बने हैं परन्तु काल तो शून्य है और वर्तमान ही क्षण है। अर्थात् जो हम जीवन की गणना दिन–रात्रि, महीनों, सालों द्वारा करते हैं, यह सब व्यर्थ है। हम वर्तमान का क्षण संभल–संभल कर केवल शुभ विचार–शुभ कर्मों के लिए ही प्रयोग में लाँए, भूल कर भी इसका दुरुपयोग व्यसनों आदि में न करें, क्योंकि क्षण ही बलवान् है और क्षण ही वर्तमान है। किस क्षण, किसके प्राण निकल जाएँ, इसका कोई भरोसा नहीं।

अतः कोई भी क्षण शुभ कर्म–शुभ विचार आदि किए बिना व्यर्थ ना बीत जाए। शीतल बेटी ने काल के विषय में, समय व्यर्थ व्यतीत ना हो जाए, इस विषय में अपने अच्छे विचार रखे हैं। सब नर–नारी समय का सदुपयोग करें। क्षण बीते जा रहे हैं, आयु नित्य कम होती जा रही है। जैसे कठोपनिषद् के ***ऋषि ने श्लोक 1/3/14*** में कहा–

''उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत।
क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया दुर्ग
पथस्तत्कवयो वदन्ति।।''

अर्थात् हे नर–नारियों! आलस्य एवं

विषय–विकार आदि की नींद से उठो–जागो। वैदिक श्रेष्ठ विद्वानों के आश्रय में जाकर पर ब्रह्म परमेश्वर को जानो। क्योंकि वेदों के ज्ञाता, ऋषि–मुनि तत्त्व ज्ञान के मार्ग को छुरे की तीक्ष्ण की हुई दुस्तर धार के समान दुर्गम–अत्यन्त कठिन बताते हैं। अत: एक क्षण भी व्यर्थ किए बिना निरन्तर हमें शुभ कर्मों को करने के लिए प्रयास करते रहना चाहिए।

अथर्ववेद मन्त्र 19/53/1 में कहा– ***''कालः अश्वः वहति''*** काल अर्थात् समय रूपी घोड़ा चलता रहता है, रुकता नहीं है। इसलिए हम भी कभी पुरुषार्थ करने से ना रुकें। समय के साथ–साथ आगे बढ़ते जाँए। मन्त्र में कहा– ***''तम् कवयः विपश्चितः आ रोहन्ति''*** जो बुद्धिमान् ज्ञानवान् हैं, वे तो इस समय रूपी अश्व पर सवार हो जाते हैं अर्थात् समय के साथ–साथ उन्नति करते हैं। ***मन्त्र 3*** में कहा कि यह गहन ज्ञान समझने की आवश्यकता है ***''काले अधि पूर्णः कुम्भः आहितः''*** अर्थात् काल/समय के ऊपर एक घड़ा (सम्पत्तियों का कोश) भरा हुआ रखा है। अर्थात् घड़े में सब सम्पत्तियाँ एवं अर्थ, धर्म, काम, मोक्ष भरा पड़ा है। पुरुषार्थी नर–नारी समय की तेज़ी के साथ भौतिकवाद एवं आध्यात्मिकवाद, दोनों में साथ–साथ उन्नति करके अनेक सम्पत्तियों सहित मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं और आलसी पीछे रह जाते हैं – दु:खों को भोगते हैं।

स्वामी रामस्वरूप जी के वैदिक प्रवचनों से ली हुई कुछ शिक्षाएँ

- ❖ जो ईश्वर की सृष्टि रचना को नहीं जानते, वेद कैसे उत्पन्न हुए, यह भी नहीं जानते। इसलिए वे अविद्याग्रस्त हुए वेदों में वर्णित ईश्वर को छोड़कर अन्यों की पूजा करते हैं।
- ❖ यज्ञ और वैदिक साधना करते रहने से एक समय ऐसा आएगा कि जीव पाप करने के लायक नहीं रहेगा। सामने धन होगा, तो भी चोरी नहीं करेगा। सामने विषय-विकार होंगे, तो भी उनकी अवहेलना करेगा।
- ❖ वेदों में वर्णित ईश्वर को त्याग कर, अन्यों की पूजा-पाठ करने से रज, तम, सत्त्व, इन तीनों गुणों का प्रभाव बढ़ता ही जाएगा और वे जीवात्मा को पशु-पक्षी, कीट-पतंग आदि नीच योनि में ले जाएंगे।
- ❖ पिछले युगों के राजा एवं मंत्री वेदों के ज्ञाता थे और वैदिक शिक्षाएँ उनके आचरण में थीं, जो आज नहीं हैं। उदाहरणार्थ यजुर्वेद में कहा ''तेन त्यक्तेन भुंजीथा'' अर्थात् जगत् से चित्त को हटाकर भोगों का उपयोग कर। अतः वे धन-धान्य से परिपूर्ण सोने-चांदी के बर्तनों में भोजन करते थे परंतु उनका चित्त ईश्वर एवं न्यायपूर्ण व्यवस्था में था।

– बिपिन बाडेका, मुम्बई

guava

Sugandh 'Sudhi'

Guava is most common fruit available all over the world. Several varieties of Guava are available with each variety having a unique flavor and aroma. A fruit chaat with lots of fruit variety and mouth watering chaat masala sprinkled all over but without Guava is of no taste. Jam and murabba made by mother is always a weakness because of its unmatched taste. Guava has numerous health benefits. In Ayurveda all parts of guava plants are useful and used for many medicinal purpose.

Guava is excellent for digestive system as it helps in gastric problems. Most importantly and undoubtedly in constipation related problems. To me Guava fruit has worked as wonder fruit in solving my constipation related issues.

Health benefits of Guava

Guavas prevent the development of diabetes Guava has rich fiber content that ensures the sugar levels are well regulated while the low glycemic index inhibits a sudden spike in sugar levels.

Guavas are one of the richest sources of Vitamin C.

It is said that Guavas contain more vitamin C content as compared to oranges. Vitamin C helps improve immunity and protects against common infections and keeps the eyes healthy.

Guava fruit strengthen the heart.
The sour flavor of this fruit when consumed regularly helps in improving and strengthening the heart.

Guava helps in treating oral problem.
Guava leaves have a potent anti-inflammatory action and a powerful antibacterial ability that helps fights infection and kills germs. Boiling few leaves of guava in a glass of water in a vessel until half of the water is left can be used for gargle for treating oral problems such as toothache, ulcer and swollen gums.

Guava Treats Constipation It is said to be one of the richest sources of dietary fiber as compared to other fruits which makes it extremely beneficial for digestive health. Guava taken preferably with black pepper and salt helps to relieve acidity of body. Guava seeds serve as excellent laxatives, helping the formation of healthy bowel movements.

Guava helps improve vision Due to the presence of Vitamin A content, guava is well known as a booster for vision health. It not only prevent degradation of eyesight, but helps improve eyesight. It can help slow down the appearance of cataracts and macular degeneration.

Guava helps to fight stress The magnesium present in guavas helps fight stress. It relaxes the muscles and nerves of the body. Guava helps maintaining body Weight. It is a great metabolism booster which helps to keep the body fit and healthy. As compared to other fruits, guava has less sugar content.

Guava helps repair your skin and keep your smile intact.

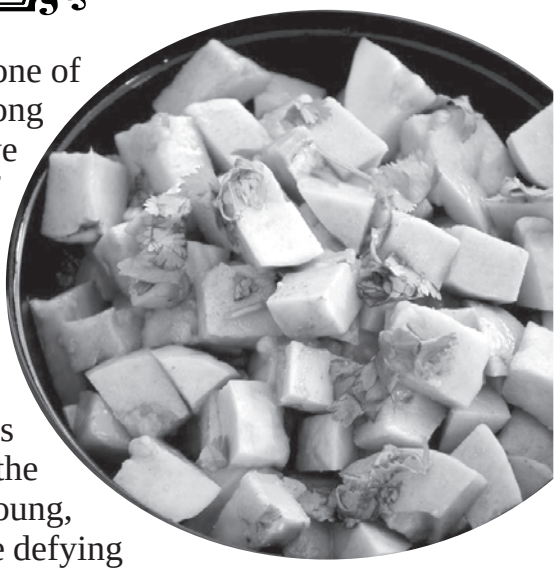

Guava helpful in Cough and Cold Guava has one of the highest quantities of vitamin-C and iron among fruits, and both are proved to be preventive against cold and viral infections. The juice of raw guavas or guava leaves is very helpful in relieving cough and cold since it helps get rid of mucus and disinfects the respiratory tract, throat and lungs.

Guava helps in maintaining Skin texture As it is rich in vitamin E and C, it helps in maintaining the natural skin texture. It also keep the skin young, beautiful and healthy for a longer period of time defying the wrinkles. There is a saying "Guava a day, keeps fine lines away".

Guava helps in preventing growth of cancer cells The high level of antioxidants present in guava helps prevent the development and growth of cancer cells.

Resists Hair Loss Being extremely rich in vitamin C, guava is one of those fruits that promote healthy hair growth. It also helps in resisting and preventing hair loss problems.

Guavas are nutritionally rich with multiple benefits for people suffering from various diseases. The regular consumption of this fruit can prevent chronic diseases. The best way is to eat one and keep the body healthy. Above is the general information and it is advisable to consult the Doctor for any particular use and health benefits of this amazing Guav

A tree is known by its fruit, a man by his deeds

अर्ध-मत्स्येन्द्र आसन

स्वामी रामस्वरूप 'योगाचार्य'

इस सत्य को पुन: दोहराँए कि आसन प्राणायाम आदि की शिक्षा आचार्य के सम्मुख बैठ कर ही प्राप्त की जाती है। नाथ परंपरा में गोरखनाथ जी के ***गुरु मत्स्येन्द्र नाथ जी एक महान् योगी हुए हैं।*** वह अधिकतर इसी आसन पर बैठा करते थे। अत: उस महान् योगी के नाम पर ही इस आसन का नाम अर्ध—मत्स्येन्द्र आसन/ मत्स्येन्द्र आसन पड़ा।

विधि

१. नितम्बों पर बैठकर टाँगें सामने की ओर फैलाँए।
२. बाँए पाँव की एड़ी को दाईं तरफ से लाकर नितम्बों के पास इस प्रकार ले जाँए कि एड़ी का हिस्सा गुदा के पास लग जाए।
३. दाँए पाँव को बाँए पाँव के घुटने के पास ज़मीन पर पाँव के पंजे पर दृढ़ता से रखे रहें।
४. बाईं भुजा को वक्ष स्थल के पास लाकर बगल के हिस्से को दाँए पाँव के घुटने के नीचे, जंघा के ऊपर स्थापित करें।
५. दाँए हाथ से पीछे की तरफ से कमर को लपेट कर नाभि को छूनें का प्रयत्न करें। (नाभि छुई नहीं जाएगी परन्तु प्रयत्न करते रहें।)
६. दोनों नेत्रों से सामने देखते हुए स्कन्ध से गाल को लगा दें।
७. इसी क्रिया को फिर बदल कर दाँए पाँव की एड़ी को गुदा के पास रखकर करना चाहिए।

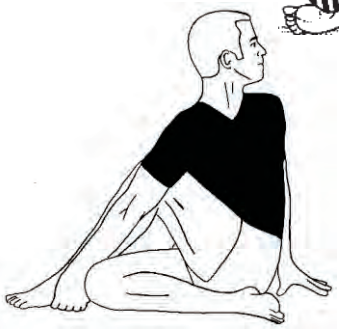

लाभ

१. पीठ, पेट, पाँव, बाजू, कमर, कण्ठ, नाभि, जंघाँए, सीना और सीने की नसें, सबको लाभ होता है।
२. जठर अग्नि तेज़ होती है।
३. पेट दर्द, अफारा आदि रोग नहीं रहते।
४. रक्त का संचालन ठीक प्रकार से होता है।

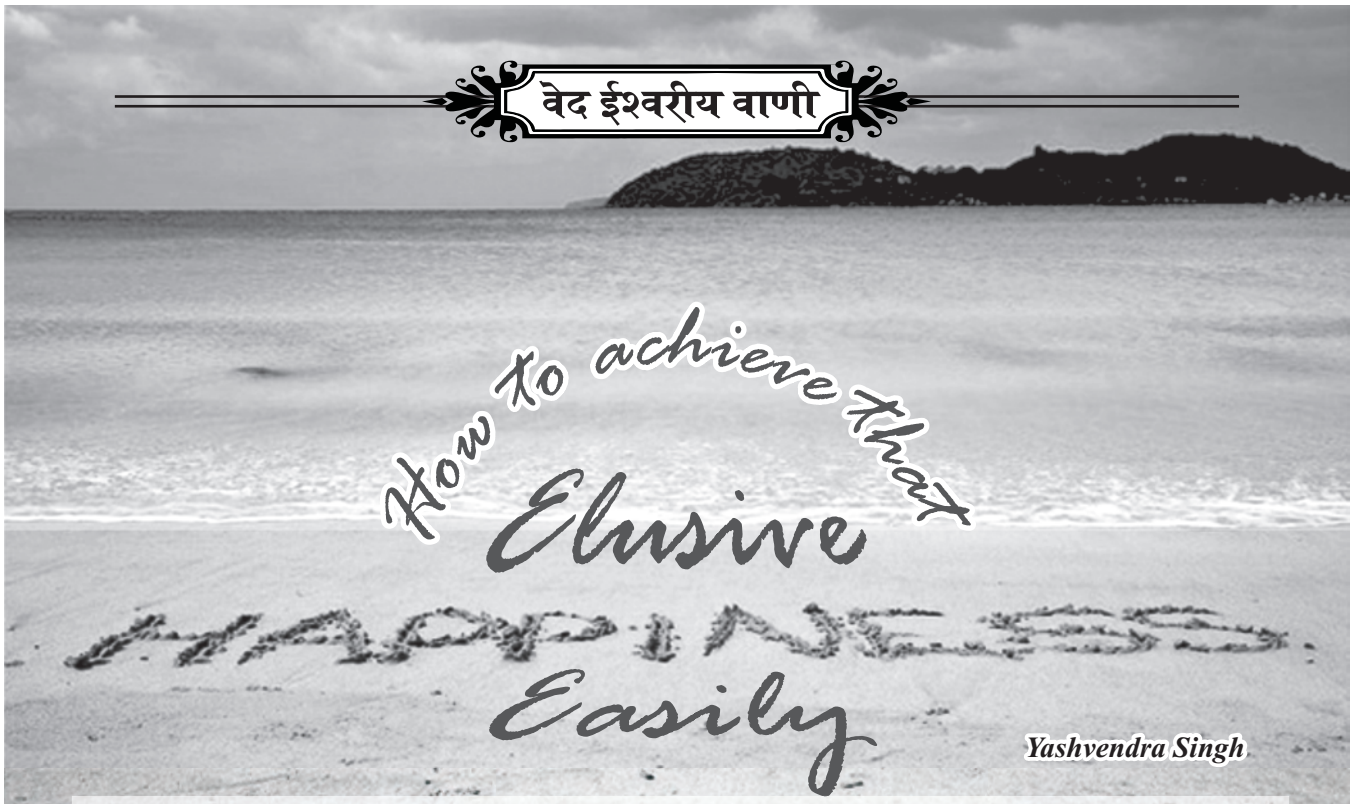

How to achieve that Elusive Happiness Easily

Yashvendra Singh

Every individual in constantly striving to be happy. But what is happiness? It's difficult to define happiness because it may mean different things for different people. ***The concept of happiness varies from person to person.*** However, we can generalise happiness as the positive feelings and emotions that a person experiences from inside. ***It is the balance between the spiritual and physical worlds.*** It is a state of mind, an emotion, and perhaps life itself.

Happiness is not something that can be turned 'on' or 'off' by just the flip of a button. It needs to be discovered by an individual. If we look around us, there are very few people who seem to be happy. It looks as if happiness is a rare commodity. One of the many reasons for people to be glum most of the times is because they are caught in a time warp. ***Instead of living in the moment, they are either brooding over the past or stressed about the future.***

Is it that tough to be happy? Well, actually it isn't. Everyday life can easily be filled with happiness if one has the right attitude towards life. Believe me, happiness can be achieved by doing only a few things right. There are thousands of books and articles written and tons of research done on how to achieve happiness. However, it is no rocket science. From my personal experience, I would like to share a few simple things,

God leaves us to bear sorrows, if we leave Yajyen- Yajurved Mantra 2/23.

which if followed in life, will lead one to happiness. In fact, one doesn't have to go out of the way to do any of them. They can easily be a part of everyday life.

Work Diligently

Whatever one does, should be done conscientiousl. Putting one hundred percent in the job at hand gives an immense feeling of achievement and satisfaction. There are people in office who try and avoid working. They may get a temporary sense of ease but in the long-term, happiness eludes them. On a typical work day, give your heart and soul into work. You will surely feel the difference on the way back home. Having a sense of achievement after a long hard day's work is nothing but happiness.

Exercise Regularly

This is a no brainer. It has been scientifically proven time and again that exercising releases mood lifting hormones in the body. Exercising daily doesn't mean one has to hit the gym or get a personal trainer. Simply walking daily for 30 minutes or an hour of yoga every day will be as effective.

Help Someone, Anyone

This is very easy to do but is rarely done. One doesn't have to go out of the way to help others. Dropping a colleague home on the way back from office or simply complimenting someone genuinely can work wonders.

Have a goal and dream about it

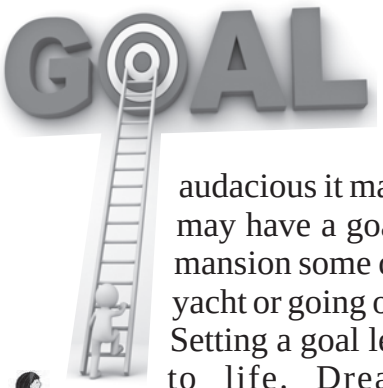

It's important to have an ultimate goal in life however audacious it may be. A person may have a goal of owning a mansion some day or a luxury yacht or going on a world tour. Setting a goal lends a purpose to life. Dreaming about achieving that goal gives happiness. This doesn't mean that you just day dream all the time. Dreaming has to be backed by hard work and a solid roadmap. However, thinking about the goal and the sense of eventually achieving it gives a sense of joy.

Protect the cow and other animals- Yajurved Mantra-3/37.

Conclusion

While it's good to chase happiness, there is nothing called ***'destination happiness'.*** Life is all about enjoying its various facets and taking in its myriad hues and colours. There are ups and downs in life with some days being superb, others good, and some outright bad. That's all fine. In the end, happiness is all about letting go of the limited view and embracing diversity.

Further Insight by the Editor

Dear Son Yashvendra, has very well expressed his valuable views about maintaining happiness. I appreciate hm. However, to achieve an elusive happiness is also a matter of an aspirant, who while discharging all his moral duties also daily both times tries to concentrate his mind, to realise truth. In such case, the worldly unnecessary desires are controlled and he is satisfied within the means which he gets by hard working.

In ***Yog Shastra Sutra 2/42,*** such stage is as follows:-

"SantoshaatAnuttamahaSukhLabhaha"

i.e. by contentment, the acquisition of extreme happiness is achieved.

The meaning of anuttamaha is extreme and sukh is happiness. The idea thereof is this that if an aspirant by virtue of following vedas and practisingYog Philosophy mentioned therein, achieves the divine quality of contentment then there is no happiness greater than it.

At a stage, Raja Bhartrihari has beautifully stated that:-

"Trishnna Na JeernnavayamevJeernnaha"

i.e., our desires and avarice do not weaken or turn old rather we ourselves become so.

Therefore as quoted above, from contentment/satisfaction, supreme happiness/pleasure is obtained. If the desire of a person is fulfilled, he feels happy otherwise unhappy. ***So happiness is not a matter where all desires are fulfilled but is a matter where desires are controlled and contentment is achieved.***

VIV

Without argument/discussion truth cannot be established- Nyaye Shastra.